BONZURI BYTES
HISTORY FOR THE PEOPLE IN HURRY

ब्लू स्टार

अस्सी के दशक का भारत

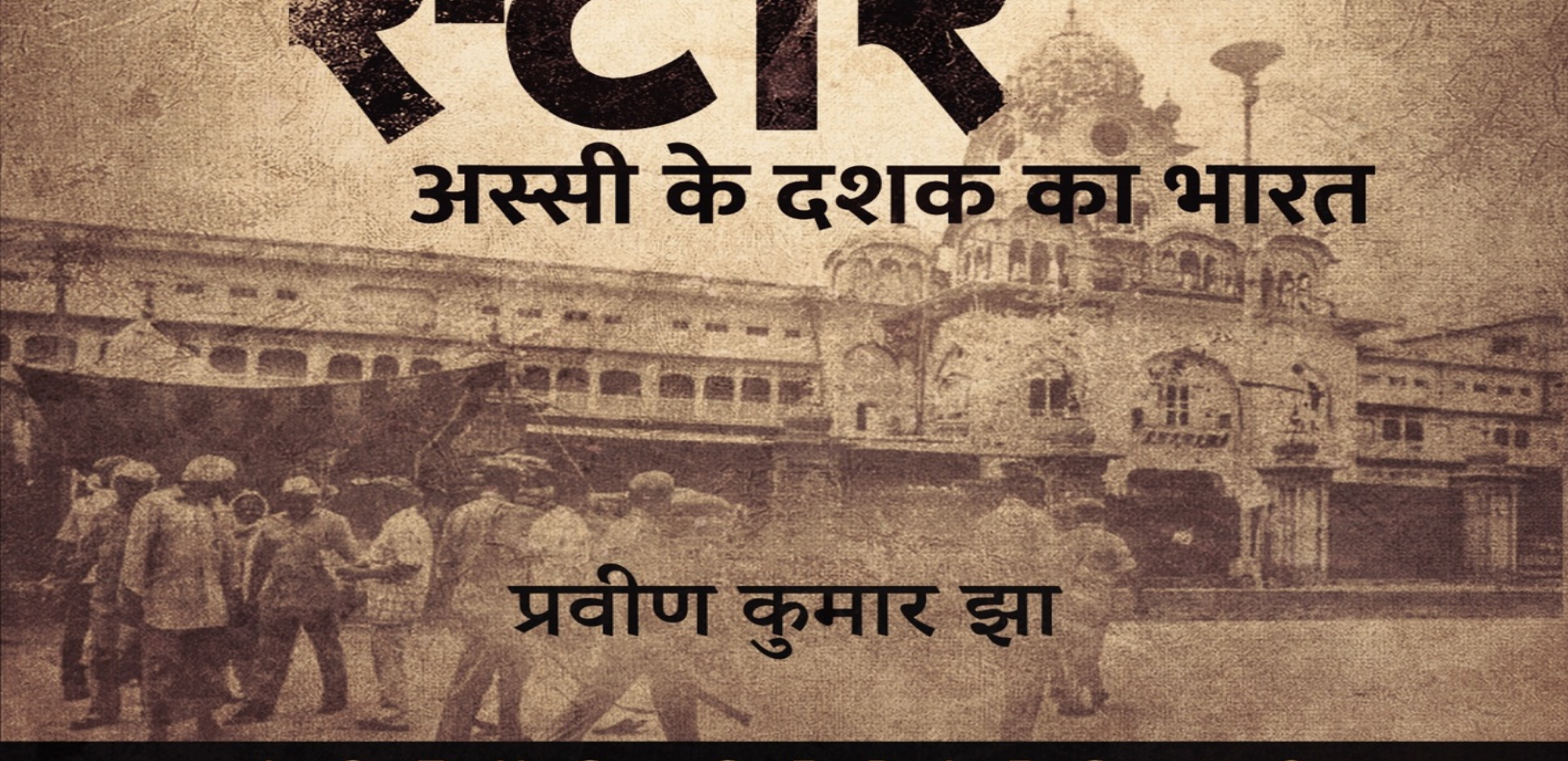

प्रवीण कुमार झा

LOTUS SERIES : 2

VISIT…

ब्लूस्टार
अस्सी के दशक का भारत

लोटस सीरीज-2

प्रवीण झा

ब्लूस्टार - अस्सी के दशक का भारत

लेखक: प्रवीण कुमार झा

© प्रवीण कुमार झा

प्रथम संस्करण : जून 2020

प्रकाशक: Bonzuri Projects
bonzuriprojects.com

आवरण – कुमार अमित
प्रूफ़रीडिंग - अभिषेक सूर्यवंशी

इस पुस्तक के सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक के लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश की फोटोकॉपी एवं रिकॉर्डिंग सहित इलेक्ट्रॉनिक अथवा मशीनी, किसी भी माध्यम से अथवा ज्ञान के संग्रहण एवं पुन: प्रयोग की प्रणाली द्वारा, किसी भी रूप में पुनरूत्पादित अथवा संचारित-प्रसारित नहीं किया जा सकता।

अनुक्रम

भूमिका

राज करेगा खालसा

आर्य समाज से अकाली आंदोलन तक

आज़ाद पंजाब

खालिस्तान

नया संत

निरंकारी

मौतों का सिलसिला

लोंगोवाल

भिंडरावाले की सेना

राष्ट्रपति शासन

लोंगोवाल बनाम भिंडरावाले

राजनीतिक मोड़

ऑपरेशन का आग़ाज़

ब्लू-स्टार

विद्रोह

संदर्भ

भूमिका

मेरी सुबह गुरबाणी के शबद सुन कर अक्सर होती है। रागबद्ध आध्यात्मिक संगीत। यही वातावरण अलौकिक प्रतीत होने लगता है, जब हम किसी गुरुद्वारे में प्रवेश करते हैं।

विदेशों में मंदिरों से अधिक गुरुद्वारे मिल जाते हैं क्योंकि सिख चहु-दिशा में पूरी पृथ्वी पर पसरे हैं। स्पेन के एक वीरान द्वीप पर मुझे सिख परिवार मिल गया। नॉर्वे में एक पहाड़ी के नीचे नर्सरी चलाते सिख मिल गए, जबकि दूर-दूर तक ना कोई शहर था, ना गाँव। यह अद्भुत है कि ख़ालिस पंजाबी बोलते लोग एक ध्रुवीय देश में पौधों की नर्सरी चल रहे हैं।

बॉलीवुड की रची पंजाबी पॉप दुनिया के इतर भी एक पंजाब है, जो उनके लोक-संस्कृति से बना है। उनकी मिट्टी से बना है। उनके इतिहास से बना है। उनके खून से सींचा गया है।

सिखों का खून कभी अफ़ग़ानों ने तो कभी मुगलों ने बहाया। विभाजन का दर्द भी पंजाब ने सहा। अस्सी के दशक ने समकालीन इतिहास का सबसे संवेदनशील पंजाब देखा है। आज के पंजाब के आभासी उल्लास में छुपा एक दर्द महसूस किया जा सकता है।

ऑपरेशन ब्लू-स्टार भारतीय सेना के शौर्य और इच्छा-शक्ति का उदाहरण तो है ही, लेकिन भविष्य की राजनीति के लिये एक अध्याय भी है। राजनीति और कट्टरता के कॉकटेल से कभी-कभी देश उस चौराहे पर पहुँच जाता है, जब आगे कोई रास्ता नहीं सूझता। जो भी रास्ता चुनता है, वह गड्ढे में ही ले जाता है। 1984 का वह लम्हा ऐसा ही एक लम्हा था।

इस पुस्तक में मैंने सिख इतिहास से गुजरते ऑपरेशन ब्लू-स्टार की जड़ों को तलाशने का प्रयास किया है। एक संवेदनशील विषय और भारतीय होकर भी उस परिवेश की सतही समझ के कारण अगर किन्ही की भावनाओं को ठेस पहुँचे, तो मैं क्षमा चाहूँगा। जैसा मैंने आगे भी लिखा है, इस प्रकरण को लिखते हुए मेरे हाथ काँप रहे हैं और संभव है कि मेरे पूर्वाग्रह, मेरी भावनाएँ तथ्यों के समानांतर चल रही हों। संभव है कि हर भारतीय की तरह मेरे अंदर भी एक सिख हो, जैसे हर भारतीय सिख के मन में भारत।

31 अक्तूबर, 1984

सर्दियों के आग़ाज़ में कुछ वक्त था, लेकिन सफ़दरजंग रोड पर लगे मेक्सिकन रेशम पेड़ों के पत्ते सुर्ख़ हो चले थे। यह प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के व्यस्त जीवन की एक आम सुबह थी। वह देर रात भुवनेश्वर से चुनाव प्रचार बीच में छोड़ कर लौटी थीं। उस दिन राहुल-प्रियंका की कार दुर्घटना हुई थी, तो वह डर गयी थी। उन्हें पहले भी धमकियाँ मिलती रही थी। सुबह चार बजे तक उन्हें नींद नहीं आयी। बहू सोनिया ने देखा कि उनके लिये अस्थमा की दवाएँ टटोल रही थीं। सुबह नाश्ते के बाद निजी चिकित्सक डॉ. माथुर ने जाँचा तो सब ठीक था।

हॉलीवुड अभिनेता पीटर उस्तिनोव उनके पीछे भुवनेश्वर से पड़े थे कि एक आइरिश टेलीविज़न शो के लिये साक्षात्कार लेना है। योजना थी कि सुबह सवा नौ बजे प्रधानमंत्री कार्यालय में साक्षात्कार हो जाएगा। निवास से 1, अकबर रोड कार्यालय साथ ही लगा हुआ था। दोनों के मध्य बाड़ लगे थे, और बीच में एक छोटा दरवाजा (विकेट गेट) था।

इस टेलीविज़न साक्षात्कार के कारण प्रधानमंत्री जी ने उस दिन काले बॉर्डर की केसरिया साड़ी पहन रखी थी, जो स्क्रीन पर फबे। इसी कारण उन्होंने मोटा बुलेटप्रूफ़ कवच नहीं पहना। उस दिन रोज सुबह लगने वाली जनता-दरबार भी नहीं लगी, जिसमें सुदूर प्रदेशों से लोग अपनी समस्या लेकर मिलते थे। उसी दोपहर उन्हें ब्रिटेन के पूर्व प्रधानमंत्री जेम्स कल्लाघन से मिलना था, और ब्रिटिश राजकुमारी एन्ने के साथ रात्रिभोज भी था।

सुबह 9 बजकर 10 मिनट पर इंदिरा गांधी अपने आवास से निकली। हल्की धूप थी तो कॉन्स्टेबल नारायण सिंह एक छाता लिये उनके साथ चल रहे थे। साथ ही उनके सचिव आर. के. धवन भी थे। उनके सुरक्षा अधिकारी रामेश्वर दयाल, सलाहकार जी. पार्थसारथी और कर्मचारी नाथू राम पीछे चल रहे थे। जैसे ही इंदिरा गांधी अपने आवास और ऑफिस के मध्य गेट पर पहुँची तो वहाँ ड्यूटी पर तैनात सब-इंस्पेक्टर बेअंत सिंह को देख मुस्कुराई। बेअंत उस दिन साधारण सिविलियन भेष-भूषा में थे, लेकिन इंदिरा गांधी ने शायद इस बात को तवज्जो नहीं दी।

तभी बेअंत ने अपना रिवॉल्वर निकाला और उनकी ओर तान दिया।

इंदिरा ने कहा, “यह आप क्या कर रहे हैं?”

बेअंत ने एक-एक कर पाँच गोलियाँ चलायी। एक गोली रामेश्वर दयाल को भी लगी। इंदिरा गांधी जमीन पर गिर पड़ीं, बेअंत सिंह ने पास खड़े दूसरे अंगरक्षक को आवाज दी, “सतवंत!”

कॉन्स्टेबल सतवंत सिंह जो यह सब देख कर मूर्तिवत खड़े थे, अचानक स्टेन-गन लेकर उछले, और दनदनाती गोलियों से इंदिरा के शरीर को छलनी कर दिया। लगभग पच्चीस गोलियाँ चली, जिनमें कई छिटक कर आवास के छत पर भी जा लगीं। घायल रामेश्वर दयाल उनको बचाने के लिये आगे बढ़े, लेकिन कुछ न कर सके।

इस हमले के बाद बेअंत सिंह ने अपनी वाकी-टॉकी वहीं बाड़ पर लटका कर अपने हाथ खड़े कर

दिये और कहा, “हमें जो करना था, वह कर दिया; अब आपको जो करना है, कर लो।”

दोनों को पकड़ कर कार्यालय की पुलिस चौकी ले जाया गया। वहाँ ITBP के जवानों ने गुस्से में उन्हें पीटना शुरू किया और उन पर गोलियाँ चला दी। बेअंत सिंह वहीं ढेर हो गए। सतवंत सिंह को भी गोलियाँ लगी, और बुरी तरह घायल हुए, लेकिन बाद में राम मनोहर लोहिया अस्पताल में उन्हें बचा लिया गया।

प्रधानमंत्री कार्यालय में उस वक्त उपलब्ध एंबुलेंस का ड्राइवर चाय पीने गया था। आर. के. धवन ने एक एम्बैसेडर कार में इंदिरा के शरीर को लिटा दिया।

सोनिया गांधी घर में थी। उन्हें पहले लगा कि दीवाली के पटाखे फूट रहे हैं, लेकिन जब लोगों की आवाजें सुनी, वह बाहर आयी। देखा कि इंदिरा गांधी के शरीर को गाड़ी में ले जाया जा रहा है। वह ‘मम्मी! मम्मी!’ चिल्लाती भागी आयी और गाड़ी में इंदिरा के सर को गोद में लेकर बैठ गयी। पीछे माखनलाल फोतेदार भी साथ चल पड़े। 9 बजकर 32 मिनट पर गाड़ी बिना किसी पूर्व सूचना के AIIMS में लग गयी। वहाँ जूनियर डॉक्टरों में खलबली मच गयी। सीनीयर सर्जन दौड़े आए, और तुरंत ऑपरेशन थिएटर ले जाया गया। प्रधानमंत्री को बीस से अधिक गोलियाँ लगी थी, जो लिवर, गुर्दों और कई धमनियों को भेद गयी थी। अस्सी बोतल खून चढ़ाया गया, हृदय-फेफड़ा बायपास मशीन लगायी गयी; लेकिन प्रधानमंत्री तो अस्पताल आने से पहले ही दम तोड़ चुकी थी।

मेनका गांधी अपने बेटे वरुण के साथ पहुँची और कहा, “यह मैं क्या सुन रही हूँ? मम्मी नहीं रही?”

ऐसी कोई औपचारिक घोषणा तब तक नहीं हुई थी। आखिर 2 बजकर 20 मिनट पर डॉक्टरों ने मृत्यु की गुप्त घोषणा की, जो बाहर BBC के पत्रकारों में लीक हो गयी।

उस समय दिल्ली से दूर कलकत्ता के पास हुगली डेल्टा में राजीव गांधी और वित्त मंत्री प्रणव मुखर्जी चुनाव प्रचार कर रहे थे। खबर मिलते ही वे इंडियन एयरलाइंस के जहाज पर सवार हुए। राजीव पायलटों के साथ कॉकपिट में बैठे थे जब बी.बी.सी. रेडियो पर सुना कि प्रधानमंत्री नहीं रहीं। वे जब दिल्ली हवाई-अड्डे पहुँचे तो वहाँ अमिताभ बच्चन इंतजार कर रहे थे।

राजीव ने पूछा, “सोनिया और बच्चे सुरक्षित हैं? कैसी सुरक्षा व्यवस्था है?”

हवाई सफर में ही प्रणव मुखर्जी ने राजीव से कहा कि हमें अगला प्रधानमंत्री अभी के अभी बनाना होगा, अन्यथा माहौल बिगड़ सकता है। 6 बजे शाम को आकाशवाणी पर इंदिरा गांधी की मृत्यु की खबर प्रसारित की गयी। 6:45 में राजीव गांधी को राष्ट्रपति ज्ञानी जैल सिंह ने प्रधानमंत्री पद की शपथ दिला दी। 8 बजे रात को दूरदर्शन पर सलमा सुल्ताना ने समाचार पढ़ा, “आज सुबह प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी पर हमले के प्रयास हुए, जिससे उनकी मृत्यु हो गयी।”

ठीक एक दिन पहले भुवनेश्वर में इंदिरा गांधी ने किसी पूर्वानुमान के अपने भाषण में कहा था,

“मुझे इस बात से फर्क नहीं पड़ता कि मैं जियूँ या मरूँ; मेरे खून का हर एक कतरा इस देश पर कुर्बान होगा।”

जब इंदिरा गांधी को AIIMS लाया गया था, तो साथ लगे सफ़दरजंग अस्पताल में सर्जन स्वर्ण सिंह पर एक चपरासी चिल्लाया, “तुम हरामज़ादों ने मार दिया मैडम को।”

स्वर्ण सिंह ने नर्स से पूछा, “यह मुझे गाली क्यों दे रहा है?”

नर्स ने कहा, “आपको मालूम नहीं? सिख अंगरक्षकों ने प्रधानमंत्री को गोली मार दी?”

जब स्वर्ण सिंह AIIMS की तरफ जाने लगे, तो राष्ट्रपति ज्ञानी जैल सिंह की गाड़ी पर पथराव शुरू हो गए थे। एक मोटरसाइकल जला दी गयी थी।

दिल्ली के लोग चिल्लाने लगे थे, “खून का बदला खून!”

(चित्र: गुरु गोविंद सिंह सरसा नदी पार करते हुए। आरम्भिक बीसवीं सदी की पेंटिंग। स्रोत: केंद्रीय सिख संग्रहालय।)

राज करेगा खालसा

इंदिरा गांधी ने हत्या के दिन केसरिया साड़ी पहनी थी। सिखों में केसरिया रंग पवित्र है और बलिदान का द्योतक है। उनकी छोटी बहू मेनका भी सिख परिवार से थी। उनके द्वारा ख़ास चुन कर बनाए गए राष्ट्रपति ज्ञानी जैल सिंह भी सिख थे। जब उनकी लाश AIIMS में लायी गयी, तो उनके सहयोगी बूटा सिंह मौजूद थे।

जिन बेअंत सिंह ने उनकी हत्या की, उनके सिख चरमपंथियों से संबंध की खबर पहले से थी। उनको प्रधानमंत्री की सुरक्षा से हटाया जा रहा था, लेकिन स्वयं इंदिरा गांधी की इच्छा थी कि उन्हें नहीं हटाया जाए। फिर ऐसा क्या हुआ कि एक सिख ने इंदिरा गांधी की हत्या कर दी? यूँ तो इसका जवाब अधिकतर भारतवासी जानते हैं, लेकिन मैं इसकी तफ़्तीश में सिख इतिहास की ओर ले चलता हूँ।

सिख का अर्थ है शिष्य। इस पंथ की स्थापना गुरु नानकदेव जी ने की। उनके समय और उनके पहले का भारत बँटा हुआ था। यहाँ उत्तर में मुसलमानों और राजपूतों का शासन था, और कई आक्रांता पश्चिम से आते-जाते रहते थे। हिन्दुओं का समाज जातियों और पंथों में बँटा हुआ था। यूँ कहें कि अखंड भारत की परिकल्पना स्थापित नहीं थी, बल्कि देश रियासतों, धर्मों और जातियों

में बँटा हुआ था।

गुरु नानकदेव जी आखिरी लोदी शासक और पहले मुगल शासक बाबर के समय थे; और सिखों के दसवें गुरु गोविंद सिंह जी औरंगज़ेब के समय। इस तरह सिखों का इतिहास मुगलों के इतिहास के समानांतर ही चलता है। इसे यूँ भी देखा जा सकता है कि सिखों के उदय का कारण कहीं न कहीं मुगलों का उदय भी है।

गुरु नानक से पहले कई संत हुए, और सूफी परंपरा भी सक्रिय हो रही थी। गुरु नानक पर भी इसका प्रभाव हुआ ही। उन्होंने दोनों धर्मों का सामंजस्य बिठाया और आलोचना की। इससे जन्म हुआ एकेश्वरवादी और जाति-विहीन पंथ का।

यूँ तो उनके विरोध हिन्दू और मुसलमान, दोनों के रूढ़ पक्षों से थे, लेकिन गुरु नानक स्वयं जन्मना हिन्दू ही थे। जो भी हिन्दू उनके पंथ से जुड़ते गए, वे भी हिन्दुओं की नजर में हिन्दू ही थे। इसे सनातन धर्म का एक पंथ मान लिया गया। जबकि मुसलमानों में इस तरह की व्यवस्था नहीं थी, कि सिखों को उनका पंथ मान लिया जाए। मुसलमान शासक-वर्ग में भी थे, तो द्वंद्व होने की संभावना अधिक थी। गुरु नानक की दस साल की यात्रा पूरे भारत से गुजर कर सिंहल द्वीप (श्रीलंका) तक बतायी जाती है, लेकिन सिख धर्म का प्रसार मुख्यत: पंजाब तक ही सीमित रहा।

अकबर के समय अमृतसर में सिखों को जमीन मिली, जहाँ गुरु अर्जुन देव जी ने हरमंदिर साहिब की स्थापना की। इसी मंदिर प्रांगण में गुरु नानक का आदि ग्रंथ 'गुरु ग्रंथ साहिब' भी रखा गया। इसके चार द्वार इस बात के द्योतक थे कि यहाँ सभी जातियों के लोग आ सकते थे। सब मिल-बैठ कर लंगर खाते।

इसी के साथ दिल्ली की तख़्त से रंजिश भी शुरू हो गयी!

'तुजुक-ए-जहाँगीरी' में मुगल बादशाह जहाँगीर ने लिखा है,

"बेआस के किनारे एक अर्जुन नाम का हिंदू रहता है। वह भोले-भाले हिंदुओं और मुसलमानों को पकड़ कर अपना शिष्य बनाता है। वह खुद को गुरू कहता है, और तीन-चार पीढ़ियों से यह दुकान चला रहा है। अब समय आ गया है कि इनको इस्लाम क़बूल कराया जाए।"

इस तरह सिखों के पहले शहादत की शुरुआत दिल्ली के तख़्त-नशीन के हाथों स्वर्ण मंदिर में बैठे गुरू अर्जुन देव के साथ हुई। उनको लाहौर ले जाकर यातना दी गयी और उनकी मृत्यु हो गयी।

यह बात कहनी इसलिये जरूरी है कि भारतीय सेना द्वारा स्वर्ण मंदिर को घेर लेना और उस पर हमला करना इतिहास दोहराने जैसा देखा गया। इस समय दिल्ली की गद्दी पर मुग़ल बादशाह जहाँगीर नहीं, बल्कि जनता की चुनी नेता इंदिरा गांधी थी। लेकिन, यह भी ध्यान रहे कि अंदर गुरू अर्जुन देव नहीं, बल्कि एक सिख चरमपंथी भिंडरावाला हथियारों से लैस बैठे थे। लेकिन, जिस समय यह ऑपरेशन ब्लू स्टार शुरू हुआ वह गुरु अर्जुन देव के शहीदी का दिवस था!

गुरु अर्जुन देव की शहादत के बाद ही सिख एक योद्धा पंथ में तब्दील हुए। गुरु गोविंद सिंह जी ने मुगलों से लड़ने के लिये एक पूरी फौज ही तैयार कर ली। उन्होंने आनंदपुर साहिब में एक महासभा आयोजित की, और सिखों में एक 'खालसा' वर्ग बनाया। खालसा के साथ पाँच 'क' सदैव रहते— केश, कंघा, किरपान, कड़ा और कच्छा। हर खालसा 'सिंह' कहलाने लगे, युद्ध और बलिदान के लिये तैयार रहते। उनका नारा बना— 'राज करेगा खालसा!'

हालाँकि सिख भारत पर उस वक्त राज तो न कर सके, लेकिन औरंगज़ेब का जीवन दक्षिण में मराठा और पश्चिम में सिखों से लड़ते हुए ही गुजर गया। उसके बाद मुगल सल्तनत ही क्षीण पड़ गयी। अफ़ग़ानी आक्रांता अहमदशाह अब्दाली जब भारत आया तो सिखों से भिड़ंत हुई। सिखों ने उसके लश्कर पर हमला कर दिया था। अब्दाली ने बदले में हरमंदिर और अकाल तख्त को ध्वस्त कर दिया। प्रांगण के सरोवर में गाय काट कर फेंक दिये। अमृतसर का तख्त ही वीरान हो गया।

सिख हार नहीं माने। उन्होंने फिर से स्वर्ण मंदिर को खड़ा किया, और पुन: अपनी सेना तैयार की। आखिर महाराजा रणजीत सिंह के समय उन्हें राज करने का मौका मिला, जब कश्मीर से सिंध तक उनका साम्राज्य था और अफ़ग़ान शासक शाह शुजा से कोहिनूर हीरा भी उन्होंने हासिल कर लिया था। वह हीरा सदैव उनके साथ ही रहता, जिस पर बाद में अंग्रेजों ने कब्जा कर लिया और रानी विक्टोरिया के हाथ कोहिनूर हमेशा के लिये चला गया।

गुरु गोविंद सिंह ने अपनी मृत्यु से पहले घोषणा कर दी थी कि सिखों का अगला गुरू कोई न होगा। अहमदशाह अब्दाली के बाद किसी ने स्वर्ण मंदिर को भेदने का प्रयास भी नहीं किया।

यह वो मनहूस साल था 1984, जब कुछ सिखों ने यह कहना शुरू किया कि हमें हमारे गुरू गोविंद सिंह मिल गए। यही वो साल था जब सदियों बाद स्वर्ण मंदिर पर गोलियाँ चलायी गयी और इसके बड़े हिस्से को ध्वस्त कर दिया गया।

लेकिन यह सब हुआ क्यों? भारतीय फौज ने आखिर ऐसा किया क्यों?

(चित्र: अकाली आंदोलन का जैतो मोर्चा, फरवरी 1924)

आर्य समाज से अकाली आंदोलन तक

हिन्दुओं से सिखों की कोई लड़ाई नहीं थी। दसों सिख गुरु के पूर्वज पहले हिंदू ही थे। हिन्दू घरों से ही लोग सिख बनते। ख़ास कर लोग अपने बड़े बेटे को खालसा बनाते, और बाकी परिवार हिन्दू ही रहता। इस कारण उनमें जाति-प्रथा भी देर-सबेर आ ही गयी। खत्री, जाट का वर्चस्व हुआ, और मज़हबी सिख दलित या अछूत रहे। यानी, गुरु नानक ने जिस कारण यह पंथ बनाया, वह कारण ही क्षीण पड़ने लगे। गुरु का भी अभाव था। हालाँकि गुरु गोविंद सिंह जी के बाद बंदा बहादुर जैसे खालसा आए। लेकिन, प्रोटोकॉल की कमी होने लगी।

ऐसे समय में दयानंद सरस्वती के द्वारा 'आर्य समाज' की स्थापना ने सिखों का अस्तित्व संकट में लाया। दयानंद सरस्वती की इच्छा थी कि अब ये सभी सिख वापस हिन्दू धर्म और वेदों की तरफ लौटें। वहीं सिखों को लगा कि यह तो हमारा धर्म ही खत्म कर देंगे, तो उन्होंने पंजाब के लोगों को सिख बनाना शुरू किया। इसे उन्होंने शुद्धि कहा।

दयानंद सरस्वती ने गुरु नानक को दम्भी कहा। लाहौर से प्रकाशित आर्य समाचार में छपा

“नानक शाह फ़क़ीर ने नया चलाया पंथ
इधर उधर से जोड़ कर लिख मारा इक ग्रंथ
पहले चेले कर लिये, पीछे बदला भेस
सिर पर साफा बाँध कर, रख लीणे सब केस”

सिख यह पढ़ कर भड़क गए। यह बात तो गुरु नानक ने भी कही थी, और बाद में गुरु अर्जुन देव ने भी स्पष्ट किया कि सिख धर्म हिंदू और मुसलमानों से अलग है। वापस हिंदू या मुसलमान बनने का सवाल ही नहीं था, जब सिख धर्म में कई बातें सम्मिलित ही थी। हिंदुओं और सिखों में एक द्वंद्व शुरु हुआ। अस्मिता का द्वंद्व।

अंग्रेज़ आए तो फूट भी डालने लगे। महाराजा रणजीत सिंह और उनके पंजाब को एक अलग रियासत का दर्जा था ही। सिखों को वे धीरे-धीरे अपनी फौज में मिलाने लगे। आखिर यह एक योद्धा पंथ था। खुशवंत सिंह ने सिख इतिहास में लिखा है कि प्रथम विश्व युद्ध के अंत तक लगभग एक लाख सिख भर्ती कर लिये गए थे। यह समीकरण अच्छा चल रहा था, और तभी जनरल डायर की एक बहुत बड़ी ग़लती ने सिखों को अंग्रेज़ों के खिलाफ खड़ा कर दिया। जालियाँवाला बाग के वीभत्स हत्याकांड के बाद पंजाब का राष्ट्रवाद भारतीय राष्ट्रवाद के साथ एक हो गया। इसकी शुरुआत पहले ही हो चुकी थी, लेकिन यह चरम-बिंदु था।

उस समय स्वर्ण-मंदिर के ग्रंथी अंग्रेज़ों के नियुक्त किए हुए भ्रष्ट महंत होते। मोहिंदर सिंह अपनी पुस्तक ‘अकाली मूवमेंट’ में लिखते हैं कि जनरल डायर को सम्मानित कर सिख बनाने की भी क़वायद चल रही थी। जनरल डायर ने कहा कि वह बाल नहीं बढ़ाएगा, और सिगरेट पीएगा। फिर भी वे मान गए कि धीरे-धीरे सिगरेट छूट जाएगी। जालियाँवाला बाग जैसे घृणित कांड के बाद भी डायर को अकाल तख्त का समर्थन था। इसके अतिरिक्त ये महंत वेश्यालय और तमाम अश्लील गतिविधियों में भी लिप्त थे। इनका विरोध तो होना ही था।

सिखों का पुनर्जागरण हुआ, और स्वर्ण मंदिर से इन भ्रष्ट ग्रंथियों को बेदखल किया गया। 1920 से 1925 तक सिखों ने आंदोलन किया और आखिर एक कमिटी बनी- शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधन कमिटी। इनको स्वर्ण मंदिर सहित 200 गुरुद्वारों का प्रबंधन मिल गया। यह स्थिति आज तक है। इनके प्रचार-प्रसार के लिये एक राजनैतिक दल भी तैयार हुआ— अकाली दल।

सिखों ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया, और विदेशों से गदर आंदोलन भी संचालित हुआ। लेकिन, अंत में उनके साथ एक बहुत बड़ा धोखा हुआ। भारत का विभाजन सिखों की भूमि को चीर कर दो फाँक कर गया। मुसलमानों को पाकिस्तान मिल गया, और सिखों को मिला बँटा हुआ पंजाब। उनकी राजधानी लाहौर और ननकाना साहिब (गुरु नानक की भूमि) पाकिस्तान में चली गयी, जबकि अमृतसर भारत में रह गया। उसके बाद जो ट्रेन भर-भर कर लाशें आयी, वह भी उनकी ही आयी। जबकि यह विभाजन तो हिन्दुओं और मुसलमानों को बाँटने के लिये हुआ था। हिन्दुस्तान और पाकिस्तान का। इसमें सिख ख़ामख़ा मारे गए।

इसी समय सुगबुगाहट होने लगी थी खालसा सिखों के अपने स्थान की— खालिस्तान!

Local Edition

The Tribune

ESTABLISHED 1881

VOL. LXXXVI No. 359

Largest Circulation In North-West India
Ambala, Thursday, December 29, 1966

NO ASSURANCE GIVEN TO SANT FATEH SINGH

HARYANA C.M.'s ASSERTION

Undertaking & Arbitration Cannot Co-Exist

FROM OUR CORRESPONDENT

NEW DELHI, December 28.

MR. BHAGWAT DAYAL SHARMA, Chief Minister of Haryana, made it clear today that there was no commitment or assurance given to Sant Fateh Singh in respect of Chandigarh, the Bhakra complex or the territories which the Sant claimed as Punjabi-speaking.

"I have made enquiries from the highest quarters in the Government, and I want to state categorically that no assurance has been given to the Sant either orally or in writing by any responsible person from the Government. If any one in his individual capacity has made any promise or given anything in writing, neither the Centre nor the Haryana Government is responsible for it or bound by it," Mr. Sharma said.

The Haryana Chief Minister, who was addressing a Press conference here, added:

"Undertaking and arbitration cannot coexist. We have accepted arbitration, but there is no undertaking whatsoever given to any party on any point.

"The proposal of arbitration had, in fact, been initiated by me. Some Akali leaders came to me and said that some Punjabi-speaking areas had been included in Haryana and, this had given rise to a dispute. I told them that some Hindi-speaking areas had been illogically included in Punjab. Then the Punjab Chief Minister and I had a meeting. We agreed that there was some dispute and that the parties concerned should refer it to an arbitrator.

WHAT GAVE RISE TO CONFUSION

From Our Special Correspondent

NEW DELHI, Dec. 28.— Confusion about assurances to Sant Fateh Singh is reported to have arisen out of the support promised by the Punjab Chief Minister, Mr. Musafir, to the demands of the Sant. The talks with Mr. Hukam Singh had deadlocked over the demand for a commission or committee, it is learnt.

At this time the situation is understood to have been saved by Mr. Narinder Singh Brar, M.P. He is reported to have persuaded the Punjab Chief Minister to agree to go in for the appointment of a committee to adjust the boundaries. Mr. Musafir did not have the time to consult the Centre. He felt that being the Chief Minister and the man at the spot he was fully entitled to

The Chief Minister of Punjab, Mr. Gurmukh Singh Musafir, offering fruit juice to Yogiraj Suryadev to break his fast on Tuesday at Chandigarh.

MUSAFIR NOT AWARE OF ANY ASSURANCES

PPCC to press for extending Punjab boundaries

From Our Special Correspondent

CHANDIGARH, December 28.

THE Punjab Chief Minister, Mr. Gurmukh Singh Musafir, today said he was aware neither of any written assurances given to Sant Fateh Singh, nor of what they were, if any.

Talking to pressmen he was referring to the claim made by the Sant of having in his possession "written assurances" that his demands would be met.

Mr. Musafir parried questions on the details of the "disputed areas", the scope and the exact points of reference for arbitration by Mrs. Indira Gandhi, Prime Minister, except, of course, Chandigarh and Bhakra Dam.

He said he would discuss with the Haryana Chief Minister at Delhi tomorrow issues arising out of their earlier meeting, which formed the basis of the agreement

meeting of the three Chief Ministers and their subsequent discussions with the Central leaders.

Mr. Musafir was of the view that everything would be referred to the Prime Minister for arbitration.

He said the question whether or not the State Government would prefer its claims to any area had not yet been considered. Nevertheless, relevant data were being collected.

PPCC's CLAIM

Meanwhile, the Pradesh Congress has decided to present to

आज़ाद पंजाब

आज़ादी के बाद जो सिख पाकिस्तान से लौट कर भारत आए, उनमें एक बड़ी जनसंख्या दिल्ली के शरणार्थी कैम्पों में लायी गयी। उनकी संपत्ति लुट चुकी थी। भारत में मात्र 2% जनसंख्या वाला यह पंथ अब अपनी पहचान को लेकर सचेत हो रहा था। 1951 में जब जनसंघ का गठन हुआ तब पंजाब के कई हिंदू इसके सदस्य बने। सिखों का एक तबका इसे भी अपने विरोध में देखने लगा, कि कहीं भारत हिंदू राष्ट्र बन गया, तो उनकी अलग पहचान बच नहीं पाएगी।

1953 में जवाहरलाल नेहरू ने भाषाई आधार पर राज्यों के विभाजन की जब बात कही, तब अकाली दल ने पंजाब के विभाजन के लिये कहा। पंडित नेहरू ने कहा कि पंजाब का विभाजन संभव नहीं, क्योंकि यह हिंदी से मिलती-जुलती भाषा है। सिखों की यह इच्छा थी कि राज्य में गुरमुखी ही शिक्षा का माध्यम हो।

नेहरू पंजाब को बाँटने के सख़्त खिलाफ थे। उन्होंने संसद में कहा, “आप भाषाई नहीं, धार्मिक विभाजन की बात कर रहे हैं। भारत में ऐसा कोई भी विभाजन नहीं होगा।”

1955 से सिखों का आंदोलन उग्र होता गया। मास्टर तारा सिंह के नेतृत्व में रोज सुबह जत्था निकलता, जो पहले अकाल तख्त को प्रणाम करता और फिर गिरफ्तारी देता। वे लोग वहीं सामने हॉस्टल में जमा होने लगे, जहाँ आखिर पुलिस रेड करनी पड़ी। 1961 तक मास्टर तारा सिंह का यह आंदोलन स्वर्ण मंदिर प्रांगण में पहुँच गया, और वहीं से पंजाब सूबे की माँग होने लगी।

1961 के सेंसस में अधिकतर पंजाबी हिंदुओं ने अपनी मातृभाषा हिंदी लिखी, पंजाबी नहीं। यह एक अलग ही मुद्दा बन गया कि हिन्दू सिखों का साथ नहीं दे रहे।

उसी साल 15 अगस्त को मास्टर तारा सिंह अनशन पर बैठे कि तब तक नहीं अन्न खाएँगे, जब तक पंजाबी सूबा नहीं बन जाता। नेहरू ने पंजाबी सूबा तो नहीं दिया, लेकिन फिर भी तारा सिंह ने अपना अनशन तोड़ दिया। उसके बाद तारा सिंह से सिखों का भरोसा उठ गया। बुजुर्ग तारा सिंह को अरदास (प्रण) से मुकरने के लिये स्वर्ण मंदिर में झाड़ू लगवाया गया और सेवाएँ करवायी गयी। अकाली दल में उनके विपक्षी फतेह सिंह नामक जाट नेता का उदय हुआ। उस समय से आज तक जाटों का वर्चस्व रहा ही है।

नेहरू ने तो मरते दम तक पंजाब का विभाजन नहीं होने दिया, लेकिन इंदिरा गांधी ने 1966 में पंजाब को बाँट कर हरियाणा और हिमाचल प्रदेश राज्य बना दिये। चंडीगढ़ केंद्र शासित प्रदेश बना और पंजाब-हरियाणा की साझी राजधानी भी। सिखों को जो चाहिये था, वह मिल गया। सिख-बहुल पंजाब सूबा।

लेकिन, चंडीगढ़ को लेकर अब भी तकरार थी। चंडीगढ़ एक खूबसूरत शहर है जिसकी प्लानिंग कारबूजियर ने 1951 में की थी। इसकी एक-एक सड़क, इमारत, बगीचे, चौराहे काग़ज से जमीन पर उतारे गए थे। नेहरू अमृतसर को राजधानी नहीं बनाना चाहते थे, क्योंकि अमृतसर भारत-पाक सीमा के काफी करीब थी। इसलिए, चंडीगढ़ का निर्माण हुआ। लेकिन, पंजाब के

विभाजन के साथ ही इस शहर के लिये खींच-तान शुरू हो गयी।

अब देखिए, सिखों में बलिदान का कितना महत्व है।

जब अकाली दल के नेता फतेह सिंह ढीले पड़ने लगे तो वयोवृद्ध स्वतंत्रता सेनानी दर्शन सिंह फेरुमन ने चंडीगढ़ के लिये आमरण अनशन का निर्णय लिया। उन्हें गिरफ्तार किया गया तो वह जेल में ही 15 अगस्त, 1969 को अनशन पर बैठ गए। आखिर अक्टूबर में उनकी मृत्यु ही हो गयी।

इसके बाद फतेह सिंह को लगा कि उन्हें भी बलिदान देना होगा। अकाल तख्त के पास एक इमारत के ऊपर एक पाँच फीट चौड़े कड़ाही में किरासन तेल भर कर डाला गया। वहीं फतेह सिंह आत्मदाह करने वाले थे। उनके शरीर को बाँधने के लिये जंजीरें भी लगा दी गयी थी कि वह भाग न जाएँ। जब आखिरी मुकाम आया, तभी इंदिरा गांधी का संदेश आया कि चंडीगढ़ पंजाब को दिया जाता है! सिर्फ दो तहसीलें हरियाणा को देने की बात हुई।

यह प्रधानमंत्री का मास्टर-स्ट्रोक था। इस फैसले से इंदिरा गांधी की जय-जयकार होने लगी, और अकाली दल का प्रभाव घटता चला गया। इसके बाद दो और घटनाएँ हुई।

पहली तो 1971 युद्ध में इंदिरा गांधी का दुर्गा कहलाना, और सिखों के बदौलत फौज की शानदार जीत। उसके एक दशक बाद 1982 में भारत को पहला सिख राष्ट्रपति मिलना।

राष्ट्रपति बनते ही ज्ञानी जैल सिंह ने कहा, “अगर हमारी नेता झाड़ू लगाने भी कहती, तो मैं जरूर लगाता। उन्होंने तो मुझे राष्ट्रपति बनाया।”

कई वर्षों के बाद इंदिरा गांधी की बहू सोनिया गांधी ने भी एक सिख को प्रधानमंत्री पद पर बिठाया।

(चित्र: ख़ालिस्तान की मुद्रा)

ख़ालिस्तान

“पाकिस्तान से हमें क्या मिला? ठन ठन गोपाल!” - जगजीत सिंह चौहान, खालिस्तान के स्वघोषित संस्थापक और राष्ट्रपति

पंजाब भारत के सबसे समृद्ध राज्यों में है। उस समय भारत के सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) का आधा अनाज पंजाब से ही आता था। अलगाववादी इसे पलट कर यूँ कहते कि सिखों की धरती का अनाज हिंदुओं के हिस्से जा रहा है। पंजाब के उद्योग भी हिंदुओं के हाथ में ही अधिक थे। तीन नदियों (सतलज, रावी, ब्यास) का पानी, जिस पर पंजाब अपना हक समझता था; अब उसका एक हिस्सा हरियाणा के (हिन्दू) खेतों को सींच रहा था।

एक देश में अन्न और जल के बँटने पर विवाद भले बेतुका लगे, लेकिन भारत के राज्य इन मुद्दों पर लड़ते रहे है। उत्तर में भी, दक्षिण में भी। समस्या बढ़ जाती है, जब यह देश को धर्म के आधार पर विभाजन की दिशा में ले जाने लगता है।

‘खालिस्तान’ नाम पुराना है। 1940 ई. में ही जब पाकिस्तान का नाम उछलने लगा था, तो एक सिख चिकित्सक डॉ. वी. एस. भट्टी ने खालिस्तान नाम से एक पर्चा छपवाया। उनके अनुसार आज का पंजाब (भारतीय और पाकिस्तानी हिस्से), बलूचिस्तान और सिंध के कुछ हिस्से, आज के हरियाणा और हिमाचल मिला कर एक सिख-बहुल देश बनता। उनके समर्थन में विदेश (कनाडा-अमेरिका) संचालित गदर पार्टी के गुरदीत सिंह भी थे। लेकिन, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमिटी के मुखिया मास्टर तारा सिंह की इसमें सहमति नहीं थी।

खालिस्तान तो खैर नहीं ही मिला, इसके उलट पंजाब ही बँट गया। उसके बाद ‘आज़ाद पंजाब’ नाम की सुगबुगाहट चलती रही, लेकिन खालिस्तान नाम दब कर रह गया।

पंजाब के टांडा विधानसभा से एक दंत चिकित्सक जगजीत सिंह चौहान जब विधायक बने, तो उनके दिमाग में यह बीज पुन: अंकुरित हुआ। 1969 में वह चुनाव हारने के बाद लंदन चले गए, और वहाँ से एक नया आंदोलन शुरू किया जिसका ध्येय था- खालिस्तान।

1971 में जब भारत के कारण पाकिस्तान का विभाजन हुआ, पाकिस्तान ने भी बदला लेने के लिये रणनीति बनायी। जगजीत सिंह चौहान उस वक्त ननकाना साहिब (पाकिस्तान) आए थे, जहाँ संभवत: याह्या खान से मुलाकात हुई। वरिष्ठ पत्रकार शेखर गुप्ता को दिये साक्षात्कार में वह

कहते हैं कि जुल्फिकार अली भुट्टो ने वादा किया कि खालिस्तान देश बनेगा, और राजधानी ननकाना साहिब ही बनेगी। उसी साल उन्होंने न्यूयॉर्क टाइम्स में खालिस्तान राज्य के लिये एक विज्ञापन दिया, और सिखों से चंदा माँगा। रिपोर्ट के अनुसार लाखों डॉलर उनके एकाउंट में आने लगे। बाद में उन्होंने खालिस्तानी पासपोर्ट और मुद्रा तो छपवाई ही, भिन्न-भिन्न देशों में दूतावास भी खोले, और स्वयं इस काल्पनिक देश के राष्ट्रपति बन गए।

उन दिनों भारत सरकार को भी यह अंदेशा हो रहा था कि सिखों को विदेश-संचालित अलगाववादियों द्वारा भड़काया जा रहा है। इसमें संवेदनशील पहलू यह था कि भारत की फौज में सिखों का वर्चस्व था। अगर वे चाहते तो तख्ता-पलट भी कर सकते थे, हालाँकि उन्होंने सदैव देश का झंडा बुलंद ही किया था। गुप्त निर्देश दिये गए कि सेना में सिखों की भर्ती की बजाय अन्य प्रांतों से भर्तियाँ की जाए। यह भी एक मुद्दा बन गया कि सिखों से उनका सबसे प्रिय कार्य ही छीना जा रहा है।

1973 में आनंदपुर साहिब में अकाली दल ने एक प्रस्ताव पारित किया। इसके तहत उनकी माँग थी— 'केंद्र का पंजाब पर नियंत्रण मात्र रक्षा, मुद्रा, सूचना, और विदेश नीति तक सीमित हो। पंजाब एक स्वायत्त राज्य बने'। यह लगभग धारा 370 वाली शर्तें थी।

यह प्रस्ताव तो भारत सरकार कभी नहीं मानने वाली थी। एक कश्मीर ही भारी था, दो-दो कश्मीर कहाँ सँभाल पाती?

हालाँकि अकाली दल अध्यक्ष संत लोंगोवाल ने कहा,

"मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि हम सिखों की इच्छा भारत से अलग होने की कतई नहीं है। हम बस ये चाहते हैं कि हमें बिना किसी हस्तक्षेप के अपनी सिख संस्कृति जीने दी जाये। बेशक हमारी राष्ट्रीयता भारतीय ही होगी। हमें यह डर है कि जो हश्र बौद्ध और जैन धर्म का हुआ, वह हमारा न हो। हम हिन्दू धर्म का हिस्सा बन कर नहीं, बल्कि अलग सिख पहचान के साथ जियें।"

लोंगोवाल ने यह कह कर चिनगारी जला दी थी। इसके बाद एक ऐसे संत आए, जिनकी वजह से पंजाब धू-धू कर जल उठा। संत जरनैल सिंह भिंडरावाले!

(चित्र- जरनैल सिंह भिंडरावाले)

नया संत

एक सिख मित्र के घर में एक पोस्टर टँगी देखी, जिसमें एक खालसा सिख अपने एक हाथ में अपना सर, और दूजे में तलवार लिये खड़े हैं। मालूम पड़ा कि यह बाबा दीप सिंह हैं। जब अहमद शाह अब्दाली ने स्वर्ण मंदिर पर आक्रमण किया था, तो यह आखिरी दम तक लड़े। किंवदंती है कि सर कटने के बाद भी यह एक हाथ में अपना सर लिये लड़ते रहे। उन्होंने ही बनाया था—दमदमी टकसाल। सिखों का धार्मिक शिक्षा केंद्र टकसाल कहलाता है। दमदमी टकसाल का मुख्यालय अमृतसर से पच्चीस मील दूर चौक मेहता नामक जगह पर है।

सदियों बाद इसी टकसाल के शिखर पर आए जरनैल सिंह भिंडरावाले। यह भी एक इत्तेफाक था। उनके गुरु करतार सिंह 1977 में एक सड़क दुर्घटना में घायल हुए। जब डॉक्टरों ने कहा कि सर का ऑपरेशन करना होगा, उन्होंने अपने बाल कटवाने से मना कर दिया क्योंकि यह धर्म के विरुद्ध था। नतीजतन उनकी मृत्यु हो गयी, और भिंडरावाले मात्र तीस वर्ष की उम्र में दमदमी टकसाल के जत्थेदार बन गए। उनके स्वागत के लिये मुख्यमंत्री प्रकाश सिंह बादल और

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमिटी के गुरचरन सिंह तोहरा भी पहुँचे।

1977 वह साल था जब इमरजेंसी खत्म हुयी, और इंदिरा गांधी चुनाव हारी। पंजाब की राजनीति भी बदल रही थी।

कांग्रेसी नेता ज्ञानी जैल सिंह 1972 से 1977 तक मुख्यमंत्री रहे थे। इमरजेंसी के बाद जब चुनाव हुए तो पंजाब में अकाली दल और जनता पार्टी (मुख्यत: जनसंघी) की मिली-जुली सरकार बनी। अब संजय गांधी को इस सरकार को गिराना था।

ज्ञानी जैल सिंह ने मशविरा दिया कि संघियों को तोड़ना आसान नहीं, लेकिन अकाली दल को टक्कर दी जा सकती है।

अकाली दल पर तीन लोगों का वर्चस्व था— मुख्यमंत्री प्रकाश सिंह बादल, संत हरचंद सिंह लोंगोवाल और गुरचरण सिंह तोहरा। लेकिन, इन्हें तोड़ना कठिन था। ज्ञानी जैल सिंह और संजय गांधी ने योजना बनायी कि एक नया सिख नेता खड़ा करना होगा, जो इन तीनों पर भारी पड़े। यह कोई नयी बात नहीं थी। इस से पहले मुख्यमंत्री प्रताप सिंह कैरों ने फ़तेह सिंह को मास्टर तारा सिंह के ख़िलाफ़ खड़ा किया था, और उसके बाद ही अकाली दल कमजोर पड़ने लगा थी।

जल्द ही संजय गांधी के लोगों को एक संत नजर आए, जो घूम-घूम कर सिखों को अपने धर्म का पालन करने कह रहे थे। वह संत और कोई नहीं, जरनैल सिंह भिंडरावाले ही थे।

कुलदीप नैयर लिखते हैं कि बीस संतों की सूची बनायी गयी थी, जिनमें से दो चुने गये। यह चयन ज्ञानी जैल सिंह और दरबारा सिंह ने मिल कर किया था। कांग्रेस नेता और संजय गांधी के मित्र कमल नाथ के अनुसार बाकायदा साक्षात्कार किया गया और भिंडरावाले चुने गये। वह बोलते कम थे, लेकिन ऊँचा और स्पष्ट बोलते थे, तथा धर्म के प्रति हद दर्जे के निष्ठावान लग रहे थे। संजय गांधी को लग गया कि यह आदमी अकाली दल के गले की हड्डी बन सकता है। उन्हें यह अंदेशा नहीं था कि भिंडरावाले सिर्फ अकाली दल नहीं बल्कि उनकी माता इंदिरा गांधी के लिये भी गले की हड्डी साबित होंगे।

उस वक्त तो वह चुन लिये गये, लेकिन अब चाहिये था एक मुद्दा, जिससे कि भिंडरावाले लाइमलाइट में आएँ। और मुद्दा मिल गया! सिखों में एक पंथ है- निरंकारी पंथ। यह बाबा दयाल दास का बनाया एक पंथ है, जो पंजाबी व्यवसायियों में लोकप्रिय रहा है। अन्य सिखों को इनसे कई समस्यायें थी। मसलन ये अपने गुरु की खड़ाऊँ पूजा करते थे, जबकि गुरु गोविंद सिंह ने कह दिया था कि उनके बाद कोई गुरु न होगा। सिखों ने एक हुक्मनामा निकाला कि निरंकारियों को सिख धर्म से अलग माना जाएगा।

13 अप्रेल 1978 को निरंकारियों का एक सम्मेलन अमृतसर में आयोजित होना था। चूँकि अकाली दल सरकार में थी, वह किसी सम्मेलन को धर्म के आधार पर मना नहीं कर सकती थी। निरंकारियों के जनसंघियों से भी अच्छे संबंध थे, जो सरकार का हिस्सा थी।

तभी भिंडरावाले पहली बार जनता के बीच दहाड़े, “हम यह सम्मेलन नहीं होने देंगे। हम उनका रास्ता रोक कर उनके टुकड़े-टुकड़े कर देंगे।”

दमदमी टकसाल के भिंडरावाले और अखंड कीर्तनी जत्था के फौजा सिंह अपना दल-बल लिये सम्मेलन की तरफ निकले। रास्ते में ‘निहंगों का बूंगा’ के पास एक हिंदू हलवाई के हाथ भी काट दिये। वहाँ पहुँच कर फौजा सिंह ने निरंकारी गुरु बाबा गुरबचन सिंह के गले में तलवार लगा दी। उनके अंगरक्षक ने उसी वक्त गोली चला दी, और फौजा सिंह ढेर हो गए। उसके बाद तो दंगा छिड़ गया, जिसमें बारह सिख और तीन निरंकारी मारे गए।

कांग्रेस की मीडिया टीम ने भिंडरावाले को सिखों का नायक बना दिया। हालाँकि फौजा सिंह की विधवा अमरजीत कौर के अनुसार भिंडरावाले कायरों की तरह भाग खड़ा हुआ था। अमरजीत कौर ने बाद में अपना अलग चरमपंथी ‘अखंड कीर्तनी जत्था’ बना लिया और अंतिम समय तक भिंडरावाले के खिलाफ रही।

भिंडरावाले को राजनैतिक पहचान देने के लिये अमृतसर के अरोमा होटल में एक खालिस्तान-समर्थक पार्टी ‘दल खालसा’ से मीटिंग करायी गयी। बीबीसी के मार्क टली के अनुसार इस मीटिंग का खर्च ज्ञानी जैल सिंह ने वहन किया था। अटकलें यह भी रही कि ज्ञानी जैल सिंह स्वयं खालिस्तान-समर्थक व्यक्ति थे, और ऐसी पार्टियों से जुड़े थे।

भिंडरावाले की पार्टी को शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमिटी के चुनाव में खड़ा किया गया, लेकिन वहाँ अकाली दल के सामने वह पिद्दी साबित हुए। 140 में से बस चार सीटें जीत सके।

1980 में जब चुनाव हुए, तब भिंडरावाले ने कांग्रेस पार्टी के नेताओं के लिये चुनावी भाषण भी दिये। पंजाब कांग्रेस के अध्यक्ष आर. एल. भाटिया ने तो पोस्टर ही छपवा लिया कि भिंडरावाले हमारे साथ हैं।

एक और प्रत्याशी ने यह पोस्टर छपवाया था। वह थी संजय गांधी के खास डी. आइ. जी. प्रीतम सिंह भिंडर की पत्नी। भिंडरावाले उस वक्त उनके लिये चुनाव कैम्पेन कर रहे थे। अफवाह तो यह भी थी कि भिंडरावाले और इंदिरा गांधी एक ही मंच पर बैठे थे!

भिंडरावाले को यह नहीं मालूम था कि यही प्रीतम सिंह भिन्डर कुछ साल बाद पंजाब पुलिस चीफ बन कर आएँगे, जब ऑपरेशन ब्लू स्टार होगा!

(चित्र- घायल अमोलक सिंह को सांत्वना देते भिंडरावाले। 1978, अमृतसर)

निरंकारियों से बदला

संत भिंडरावाले को कांग्रेस का बनाया भस्मासुर कहा जाता रहा है। जैसा पहले बताया कि संजय गांधी द्वारा ढूंढ कर उनको लाइमलाइट में लाया गया। लेकिन, वह भी एक बड़े खेल का मोहरा बन कर रह गए।

ज्ञानी जैल सिंह भले ही भारत के सबसे कम शिक्षित राष्ट्रपति थे, लेकिन वह पंजाब की नस-नस पहचानने वाले और कूटनीतिज्ञ व्यक्ति थे। धर्म के ज्ञान के कारण ज्ञानी, और कई बार जेल जाने की वजह से जैल। इंदिरा गांधी को भी यह बात मालूम थी कि उनका पंजाब में कद बढ़ता जा रहा है। पंजाब के मुख्यमंत्री रहते हुए उन्होंने अकाली दल को काफी हद तक हाशिये पर ला दिया था, और स्वयं सिखों के हीरो बन गए थे। उन्होंने गुरु गोविंद सिंह के रास्तों को जोड़ कर गुरु गोविंद सिंह मार्ग बनाया। शहीद ऊधम सिंह की अस्थियाँ मंगवाई। खालिस्तानियों को भी ज्ञानी जैल सिंह में आशा की किरण दिख रही थी।

इंदिरा गांधी ने सत्ता में वापसी के बाद ज्ञानी जैल सिंह को दिल्ली बुला कर गृह मंत्री का पद दे दिया। यह एक सोची-समझी चाल थी जैल सिंह को पंजाब से हटाने की। बदले में उन्होंने जैल सिंह के विरोधी और धर्मनिरपेक्ष नेता दरबारा सिंह को मुख्यमंत्री बना दिया। दरबारा सिंह धार्मिक कट्टरता के खिलाफ थे, और एक ऐसा पंजाब चाहते थे जहाँ हर धर्म के लोग खुशी-खुशी रह सकें। ज्ञानी जैल सिंह को किसी भी तरह दरबारा सिंह की सरकार गिरानी थी। संत जरनैल सिंह भिंडरावाले को मोहरा बना कर यह संभव था।

शुरुआत हुई एक हत्या से। दरअसल, फौजा सिंह की हत्या के बदले से। निरंकारी गुरु हरबचन सिंह के दिल्ली मुख्यालय पर एक सिख रणजीत सिंह बढ़ई के तौर पर लग गए। एक रात जब

हरबचन सिंह कार्यालय लौट रहे थे, उनको खिड़की से छुप कर रणजीत सिंह ने गोली से मार दी। रणजीत सिंह 'अखंड कीर्तनी जत्था' के सदस्य थे।

गिरफ्तार होने के बाद उन्होंने कहा, "मुझे कोई गिला नहीं, यह मैंने पंथ के लिये किया।"

रणजीत सिंह का केस लड़ने के लिये खर्च वहन दिल्ली गुरुद्वारा कमिटी के मुखिया संतोख सिंह कर रहे थे। वह भिंडरावाले के साथी थे, और साथ-साथ इंदिरा गांधी से भी अच्छे संबंध थे!

हत्या के पीछे जब भिंडरावाले का नाम उछला, वह स्वर्ण मंदिर के पास एक छात्रावास में छुप गए। गृह मंत्री जैल सिंह ने उनके बचाव में संसद में कहा कि भिंडरावाले का इस हत्या में कोई हाथ नहीं।

सम्भवतः उनका हाथ था भी नहीं। जैसा पहले लिखा है, 'अखंड कीर्तनी जत्था' फ़ौज़ा सिंह की विधवा अमरजीत कौर चला रही थी। उनका भिंडरावाले से छत्तीस का आँकड़ा था। लेकिन प्रत्यक्ष या परोक्ष, इस हत्या का क्रेडिट भिंडरावाले को मिला।

भिंडरावाले ने घोषणा की थी, "जिसने भी निरंकारी गुरु को मारा, उसे अकाल तख्त सम्मानित करेगी। मैं खुद उसे सोने से तौलना चाहूँगा।"

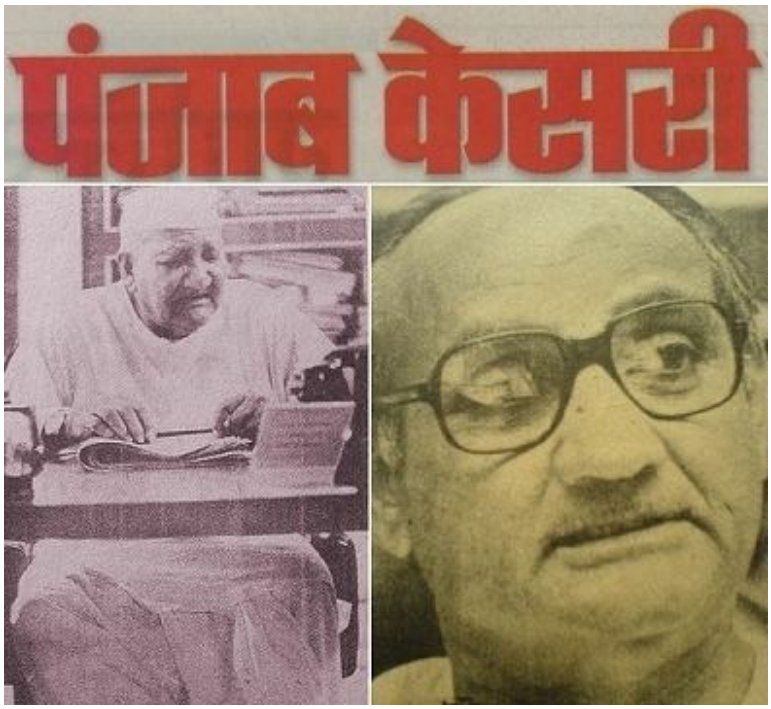

(चित्र- लाला जगत नारायण)

मौतों का सिलसिला

9 सितंबर, 1981

अपनी फिएट गाड़ी में लाला जगत नारायण (‘पंजाब केसरी’ अखबार के मालिक) पटियाला से जालंधर जा रहे थे। तभी एक एनफिल्ड बुलेट से उन पर गोली चलायी गई। गाड़ी के ड्राइवर ने बचने की कोशिश की, लेकिन पीछे बैठे 83 वर्षीय सांसद और प्रखर वक्ता जगत नारायण मारे गए। लाला जगत नारायण सिख-निरंकारी दंगे के वक्त मौजूद थे, और बाद में उन्होंने भिंडरावाले के खिलाफ गवाही दी थी। वह खालिस्तान का भी खुल कर विरोध करते रहे थे। इस बात पर सम्मति थी कि हत्या भिंडरावाले ने ही करवायी। यहाँ भी भिंडरावाले ने भड़काऊ भाषण ही दिये थे, हत्या किसी अनुयायी ने कर दी। सीधा हाथ नहीं था।

मुख्यमंत्री दरबारा सिंह ने भिंडरावाले के लिये वारंट निकाल दिया। जब यह खबर आकाशवाणी पर प्रसारित हो रही थी, भिंडरावाले हरियाणा के चंडो कलाँ में प्रवचन दे रहे थे। उस समय हरियाणा के मुख्यमंत्री भजन लाल थे। भजन लाल ‘आया राम गया राम’ नेता कहे जाते थे। वह पहले जनता पार्टी के मुख्यमंत्री थे। जब इंदिरा गांधी सत्ता में आयी, वह कांग्रेसी बन गए। उनकी सरकार कायम रही, लेकिन उन्हें तो सिद्ध करना था कि वह अच्छे कांग्रेसी हैं।

बीबीसी के सतीश जैकब के अनुसार ज्ञानी जैल सिंह ने भजन लाल को फोन किया कि भिंडरावाले को गिरफ्तार नहीं होने दे। भजन लाल ने चापलूसी में गाड़ी ही भिजवा दी। भिंडरावाले को भगा कर उन्हें सुरक्षित अपने गुरुद्वारा भेज दिया गया। जब पुलिस चंडो कलाँ पहुँची, तो वहाँ

कुछ नहीं मिला। उनके प्रवचन के कागज मिले, जिसे जला दिया गया। भिंडरावाले ने इसे एक मुद्दा बना दिया कि उनके गुरु के अक्षर जला दिये गए। यह भी एक थ्योरी है कि इसी घटना के बाद वह कांग्रेस और इंदिरा गांधी के दुश्मन बन गए।

मेहता चौक गुरुद्वारा को पुलिस बल ने घेर लिया, जिसमें भिंडरावाले छुपे थे। दंगे का माहौल बनने लगा था। 20 सितंबर, 1981 को भिंडरावाले ने गिरफ्तारी से पहले एक भाषण की शर्त रखी। उनके भाषण ने ऐसी आग लगायी कि पुलिस को गोलियाँ चलानी पड़ी और बारह लोग मारे गए। वह जिस जेल गए, वहाँ भी शर्त रखी कि उनके आस-पास मात्र दाढ़ी वाले पक्के सिख पुलिस-कर्मी ही रहें। यह शर्त भी मान ली गयी।

अगले दिन, तीन सिखों ने जालंधर में एक हिंदू बाजार में गोली चला कर चार हिन्दुओं को मार डाला। तरन-तारण में भी एक हिन्दू की हत्या हुई और कई घायल हुए।

हद तो तब हुई जब 29 सितंबर, 1981 को इंडियन एयरलाइंस का एक हवाई जहाज हाइजैक कर लाहौर ले जाया गया। यह जहाज श्रीनगर से दिल्ली जा रहा था, और पाँच खालिस्तान समर्थक सिखों ने चाकू की नोक पर हाइजैक कर लिया। उनकी माँग थी कि भिंडरावाले को छोड़ दिया जाए।

उस समय पाकिस्तान में भारतीय राजदूत नटवर सिंह थे, जो बाद में विदेश मंत्री बने। पाकिस्तान के राष्ट्रपति जिया-उल-हक ने एक नाटक प्रायोजित किया। कमांडो ऑपरेशन कर सभी यात्रियों को छुड़ाया गया, लेकिन हाइजैक करने वालों का भारत प्रत्यर्पण नहीं किया। खबरों के अनुसार उनको शाही ढंग से ननकाना साहिब गुरुद्वारा में ठहराया गया। हाइजैक करने वालों के सरदार गजेंद्र सिंह खालिस्तानी आतंकवादियों को प्रशिक्षण भी देते रहे।

भिंडरावाले को गिरफ्तार करना भारी पड़ रहा था। जो डी. आइ. जी. उनको गिरफ्तार करने चंडो कलाँ गए थे, उनके ऑफिस में बम-विस्फोट हो गया। वह बाल-बाल बचे।

14 अक्तूबर, 1981 को ज्ञानी जैल सिंह ने संसद में कहा कि भिंडरावाले पर कोई भी आरोप सिद्ध नहीं हो सका, इसलिए उनको रिहा किया जा रहा है। हद यह हो गई थी कि न्यायालय के निर्णय की प्रतीक्षा नहीं की गयी, न ही कोई पेशी हुई। गृह-मंत्री ने ही फैसला सुना दिया और भिंडरावाले को छोड़ दिया गया। उसके कुछ ही दिन बाद चंडीगढ़ में एक निरंकारी आइ. ए. एस. अफसर पर हमला हुआ, जिसमें उनके भाई की जान चली गयी।

एक नायक की तरह भिंडरावाले का स्वागत हुआ। अकाली दल भी खुल कर उनके समर्थन में आने लगा। भिंडरावाले को लगने लगा की सरकार उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकती। वह अपने अस्सी समर्थकों के साथ राजधानी दिल्ली पहुँचे। बसों के छत पर उनके समर्थक हाथ में बंदूकें लहराते चल रहे थे। उनका काफिला संसद भवन के ठीक पीछे गुरुद्वारा बंगला साहिब पहुँचा। दिल्ली गुरुद्वारा कमिटी के जत्थेदार संतोख सिंह उनके सामने हाथ जोड़े खड़े थे। रिपोर्ट के अनुसार उनके कहने पर ही इंदिरा गांधी ने स्वयं भिंडरावाले को रिहा करने के आदेश दिये थे।

21 दिसंबर 1981 को गुरुद्वारा प्रबंधक कमिटी के दो जत्थेदारों संतोख सिंह और सोहन सिंह संधू में भिड़ंत हुई। सोहन सिंह ने संतोख सिंह को गोली मार दी। संतोख सिंह के अंगरक्षक ने सोहन सिंह को मार दिया।

संतोख सिंह के मृत्यु पर हुए कार्यक्रम में राजीव गांधी और ज्ञानी जैल सिंह के साथ भिंडरावाले भी बैठे थे।

गृह मंत्री जैल सिंह की रंगी हुई दाढ़ी पर तंज कसते हुए भिंडरावाले ने कहा, "हमारे गाँव में जब कोई किसी की बहन को छेड़ता है तो उसकी दाढ़ी रंग कर, गधे पर बिठा कर घुमाया जाता है। यहाँ भी कुछ लोग दाढ़ी रंग कर आए हैं, पता नहीं किसकी बहन छेड़ कर आए हैं।"

जैल सिंह यह सब सुन कर भी खून का घूँट पीकर रह गए। उनके मन में अब भी बस यही था कि भिंडरावाले की वजह से मुख्यमंत्री दरबारा सिंह का पत्ता कट जाए।

कम्युनिस्ट नेता हरकिशन सिंह सुरजीत ने संसद में कहा, "भिंडरावाले को शह कौन लोग दे रहे हैं? कांग्रेस और अकाली दल! बस अपने फायदे के लिये ये पंजाब में सांप्रदायिक माहौल ला रहे हैं।"

Genpower
ALTERNATORS & GENERATING SETS

INDIAN EXPRESS

AMREENA
SUITINGS SHIRTINGS
ASSOCIATED SILK MILLS
JAIL ROAD, AMRITSAR

Vol. XLIX No. 226 Chandigarh: Wednesday, September 30, 1981

Khalistan men hijack Boeing to Lahore

DEMAND TO FREE SIKH LEADERS in 66 PASSENGERS RELEASED

Dal Khalsa owns it up

Next step after 10 am today: Gajendra

Wielding kirpans and hurling abuses...

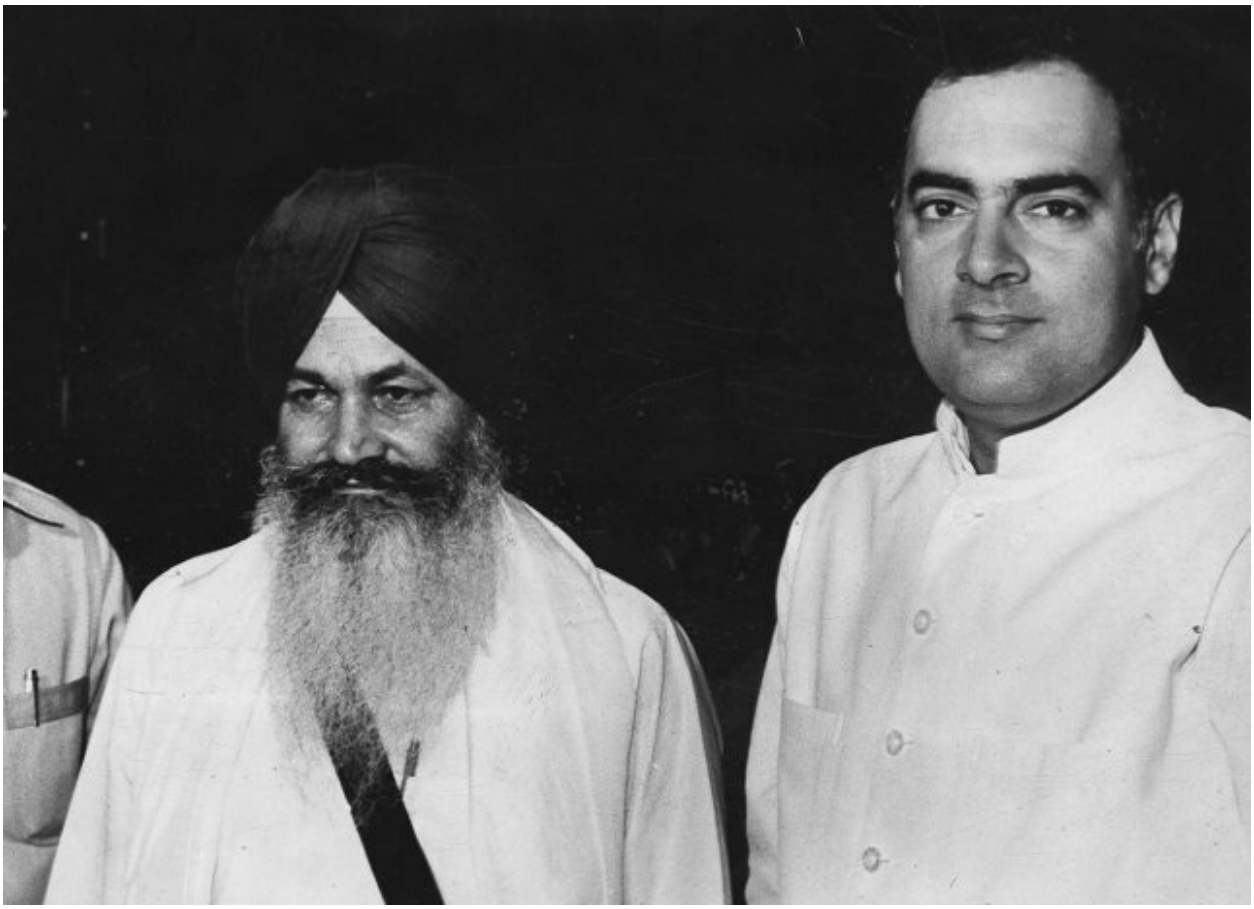

(चित्र- संत लोंगोवाल और राजीव गांधी)

लोंगोवाल

अकाली दल सिखों पर अपनी पकड़ खोता जा रहा था। अब भिंडरावाले ही सर्वेसर्वा बनते जा रहे थे। बल्कि, अकाली दल को भी अपनी पहचान बनाए रखने के लिये भिंडरावाले से जुड़ जाना ही विकल्प था। अकाली दल के अध्यक्ष संत लोंगोवाल और भिंडरावाले के मध्य रंजिश आने में वक्त था; फिलहाल तो वे आपस में एक 'कॉमन ग्राउंड' तलाश रहे थे।

समस्या यह थी कि पंजाब का नियंत्रण दिल्ली से चल रहा था। राजीव गांधी ने एक 'थिंक-टैंक' बनायी थी, और कमाल की बात कि उसमें एक भी सिख न था। एक थे केरल के ईसाई पी. सी. अलेक्जैंडर, दूसरे आंध्र के कृष्णस्वामी राव और तीसरे टी. एन. चतुर्वेदी (बाद में एम. एम. के. वाली)। ये लोग क्या समझते सिख समस्या? हालाँकि, इस थिंक-टैंक के बनने के पहले उनके स्कूली दोस्त कैप्टन अमरिंदर सिंह संत लोंगोवाल से मिलने गए थे। उनको सफलता भी मिली, और अकाली दल से सरकारी वार्ता शुरू हुई। अमरिंदर सिंह अगर नियमित मध्यस्थता करते तो शायद मामला सुलझ भी जाता।

अकाली दल में स्पष्ट ही नहीं था कि वह चाहती क्या है। आनंदपुर साहिब में जो निर्णय लिया गया

था, वह अब बिखर गया था। अब वे अजीबोगरीब माँगें करने लगे थे। जैसे एक सूची में यह भी माँग थी कि सिखों पर चुटकुले बंद किए जाएँ। एक दिल्ली से अमृतसर जाने वाली बदनाम लेट लतीफ ट्रेन 'फ्लाइंग मेल' को 'गोल्डन टेम्पल मेल' नाम दिलाने की माँग थी। फिर उन्हें लगा कि यह ट्रेन तो इतनी लेट चलती है, कि इससे अपना ही नाम खराब होगा। ये प्रस्ताव वापस ले लिये गए। बाकी के प्रस्ताव जल-विभाजन और गुरुद्वारों के प्रबंधन लेकर थे, जिनमें कई जायज़ लग रहे थे।

1982 में ये वार्ताएँ चली। अकाली दल और इंदिरा गांधी के मध्य जैसे ही कुछ सुलझता, कोई न कोई अड़ंगा आ जाता। भिंडरावाले तो चाह ही रहे थे, कि ये वार्ताएँ टूटे। इसके लिये कुछ घिनौनी हरकतें भी की गयी। अप्रिल, 1982 में अमृतसर के एक शिव मंदिर के अंदर गाय को काट कर फेंक दिया गया। इसकी ज़िम्मेदारी 'दल खालसा' ने ली।

जुलाई, 1982 में भिंडरावाले के बायें हाथ और उनके गुरु के पुत्र अमरीक सिंह को गिरफ्तार कर लिया गया। इस समय भिंडरावाले स्वर्ण मंदिर के पास गुरु नानक छात्रावास के कमरा संख्या 47 में शिफ्ट हो गये।

अगले ही महीने लोंगोवाल और भिंडरावाले ने हाथ मिला लिया और 4 अगस्त, 1982 को स्वर्ण-मंदिर के प्रांगण में धर्म-युद्ध का ऐलान कर दिया। उसके बाद सैकड़ों सिख जत्थों में रोज आते, लोंगोवाल और भिंडरावाले के भड़काऊ भाषण होते, और वे 'राज करेगा खालसा' की हुंकार भरते अमृतसर की सड़कों पर घूमते। उनकी गिरफ्तारियाँ होने लगी, और जेल भरने लगे। यही वे चाहते भी थे।

11 सितंबर, 1982 को एक बस 34 सिख आंदोलनकर्मियों को लेकर जा रही थी, कि एक रेलवे गुमती पर ट्रेन से टकरा गयी और सभी सिख मारे गए। भिंडरावाले ने इसे सोची-समझी साजिश कहा, और अमृतसर में उस स्थान पर 'गुरुद्वारा टक्कर साहिब' बनाने का निर्णय हुआ (क्योंकि वहाँ ट्रेन से टक्कर में सिख शहादत हुई थी)। अगले ही महीने, उन सब की अस्थियाँ लेकर सिखों ने दिल्ली में एक रैली निकाली और संसद में घुसने के भी प्रयास किए।

उसके बाद लोंगोवाल ने घोषणा कर दी कि वह नवंबर में होने वाले एशियन गेम्स में विरोध प्रदर्शन करेंगे। यह तो दुनिया भर में बेइज्जति हो जाती। लेकिन, इसका शांतिपूर्ण हल निकालने के बजाय सिखों का शिकार करना शुरू किया गया। हरियाणा के मुख्यमंत्री भजन लाल ने अपनी पुलिस को आदेश दिये, और सिखों को राजधानी में घुसने ही नहीं दिया गया। पंद्रह सौ सिखों की गिरफ्तारी हुई। सांसद अमरजीत कौर ने लगभग रोते हुए यह संस्मरण प्रस्तुत किया कि किस तरह उनके पति को हरियाणा पुलिस ने बेइज्जत किया।

भिंडरावाले ने स्वर्ण मंदिर में प्रवचन देते हुए कहा, "हमारे देश में खेल हुआ। दुनिया भर से लोग आए। लेकिन, सिखों को खेल देखने की इजाजत नहीं मिली। अब बताओ कि सिखों को हिन्दू अपना गुलाम समझते हैं या नहीं? ये पंडिताईन, जो प्रधानमंत्री बनी बैठी है, कान खोल कर सुन ले! यह गुलामी हम कभी बरदाश्त नहीं करेंगे।"

दिसंबर, 1982 में लोंगोवाल और भिंडरावाले ने सिख फौजियों को स्वर्ण मंदिर में बुलाया। कई

रिटायर्ड फौजी आए। आखिर भारतीय सेना के दस प्रतिशत सैनिक सिख ही तो हैं। वे देश के लिये लड़ते हैं, लेकिन जब रिटायर होकर गाँव लौटते हैं तो खास इज्जत नहीं मिलती। उस दिन भिंडरावाले की बात सुन कर कुछ फौजी जरूर प्रेरित हुए। उनमें से एक थे मेजर जनरल शाहबेग सिंह!

शाहबेग सिंह ने 1971 के युद्ध में बांग्लादेश की 'मुक्तिवाहिनी' गुरिल्ला सेना को प्रशिक्षण दिलाया था, और भारत की जीत में अहम भूमिका निभायी थी। लेकिन, अपने करियर के अंत में उन पर भ्रष्टाचार के (झूठे) इल्जाम लगाए गए और उन्हें फौज से निकाल दिया गया। उनकी पेंशन भी छीन ली गयी। देश का जांबाज फौजी अब भारतीय सरकार से नफरत करने लगा था। भिंडरावाले को अपना कमांडर मिल गया था!

(चित्र: मेजर जनरल शाहबेग सिंह)

भिंडरावाले की सेना

भिंडरावाले के दल में अलग-अलग तरह के लोग थे। जाट किसान हरित क्रांति के बाद बड़े ज़मींदारों से नाराज़ चल रहे थे। दलित मज़हबी तो पहले से खुद को शोषित महसूस करते थे। ऐसे समय में भिंडरावाले का धार्मिक पुनर्जागरण और पंजाब को हक़ दिलाने की बात लोगों को रास आ रही थी। युवा तो उनके अनुयायी बनते ही जा रहे थे, कई सुशिक्षित और NRI भी उनके साथ थे। यहाँ तक की धार्मिक कट्टरता के बावजूद वामपंथी नक्सल भी उनके दल में थे।

भिंडरावाले के साथ ऑटोमेटिक बंदूकें, ली-एनफिल्ड राइफल, तलवार, भाला लिये हुए सिख खड़े होते। कुछ खासे पढ़े-लिखे लोग भी थे। गुरतेज सिंह भूतपूर्व आइ.ए.एस. अधिकारी रहे थे। एक हरमिन्दर सिंह संधू तो फर्राटा अंग्रेजी बोलते थे, और उनको भिंडरावाले का दिमाग कहा जाता। कुछ लोगों का यह मानना है कि संधू रॉ और आइएसआइ के 'डबल-एजेंट' थे। उनका गुप्त नाम था— फाल्कन। वह सीमा-पार से खुफिया सूचनाएँ लाकर रॉ को देते। भिंडरावाले के साथ होना भी एक रहस्य ही है, क्योंकि भिंडरावाले पर जब अंतिम आक्रमण हुआ तो मात्र संधू ने ही चुप-चाप आत्म-समर्पण किया। मुमकिन है कि वह सरकार के ही आदमी हों।

एक और रहस्यमय किरदार थे सुरिंदर सिंह सोधी। वह बेहतरीन निशानेबाज थे, और कई आतंकवादी घटनाओं को मुकाम दिया। उनके बारे में यह भी प्रचलित था कि वह स्कूटर से हवाई जहाज तक चला सकते हैं, जबकि असल में वह रेडियो मेकैनिक थे। इसी तरह से कई गाँव के गुंडे-मवाली, अपराधी, स्मगलर, नक्सल सभी तरह के लोग भिंडरावाले से जुड़ने लगे थे। किंवदंती तो यह भी थी कि भिंडरावाले के बगल में एक पात्र रखा होता, जिसमें कागज की पर्चियाँ रखी होती। उन पर्चियों में किसी पुलिस अफसर, नेता या अन्य सरकारी लोगों का नाम

लिखा होता। जब भी कोई सिख उनके पास सेवा माँगने आता, वह पर्ची निकाल कर हाथ में दे देते। वह भक्ति-भाव से अपने लक्ष्य को मार कर आ जाता। हालाँकि यह अफवाह मालूम पड़ती है, और किसी भी पत्रकार ने ऐसी कोई भी पेटी या पात्र देखने का दावा नहीं किया।

जनवरी, 1983 से भिंडरावाले की फौज बे-लगाम घूमने लगी। कभी शिक्षा-मंत्री के घर पर बम फेंक रही है, तो कभी मुख्यमंत्री पर हमला। गणतंत्र दिवस आयोजन पर भी बम फेंक दिया गया। अमृतसर का सिंडीकेट बैंक लूट लिया गया।

ऐसा नहीं कि सरकार हाथ पर हाथ धरे बैठी थी। मुख्यमंत्री दरबारा सिंह खुल कर भिंडरावाले के विरोध में थे। लेकिन गृह मंत्री ज्ञानी जैल सिंह ने हाथ बाँध रखे थे। फिर भी कोशिशें चल रही थी।

मार्च, 1983 में अमृतसर से दिल्ली के रास्ते में मानावाला पुल पर पुलिस ने अपनी एक टुकड़ी लगा दी थी। डी.आइ.जी. अटवाल को खबर मिली थी कि कुछ उग्रवादी वहाँ से एक जीप पर गुजरने वाले हैं। जैसे ही वे पुल पर पहुँचे, पुलिस ने फायरिंग कर दी। जीप में बैठे हरदेव सिंह मारे गए, लेकिन जीप भगा कर स्वर्ण-मंदिर ले आयी गयी। अगले दिन लाश पुलिस को दी गयी। भिंडरावाले ने कहा कि पुलिस ने बेमतलब उनके लोगों को मार गिराया। वे निहत्थे थे। यह मुमकिन भी था। मुख्यमंत्री दरबारा सिंह ने पुलिस को यह कह रखा था कि इंकाउंटर करती रहे, जिम्मेदारी वे ले लेंगे।

भिंडरावाले को यह मालूम पड़ा कि पुलिस को वह टिप उनके अपने ही आदमी ने दी थी। कुछ दिनों बाद, पुलिस के उस मुखबिर की लाश गुरु नानक छात्रावास के बाहर पड़ी मिली।

ठीक अगले महीने 23 अप्रेल, 1983 को DIG ए. एस. अटवाल एक धर्मनिष्ठ सिख की तरह स्वर्ण मंदिर पहुँचे। उन्होंने पवित्र सरोवर की परिक्रमा की। अकाल तख्त के सामने झुक कर आराधना की। वहाँ से दर्शन ड्योढ़ी की पंक्ति में लग गए। हरमंदिर साहिब में प्रसाद लेकर वापस मुख्य-द्वार की ओर जाने लगे। वह सीढ़ीयाँ चढ़ ही रहे थे कि तभी गोलियों की आवाज आयी, और सिखों के सबसे पवित्र सीढ़ियों पर यह सिपाही ढेर हो गया। उनके अंगरक्षक भाग लिये। सामने की पुलिस चौकी ने भी कुछ नहीं किया। इतने वरिष्ठ पुलिसकर्मी की लाश दो घंटे तक पड़ी रही, जब तक मंदिर प्रशासन ने उसे पुलिस को नहीं दिया।

यह ताज्जुब की बात है कि इतना सब कुछ होने के बाद भी भिंडरावाले को गुरु नानक छात्रावास जाकर गिरफ्तार नहीं किया गया। शायद इसके पीछे भी सियासत थी। उस समय अकाली दल और कांग्रेस के बीच साँठ-गाँठ चल रही थी। प्रकाश सिंह बादल को मुख्यमंत्री बनने की इच्छा थी, और वह कांग्रेस से हाथ मिलाने को तैयार थे। ज्ञानी जैल सिंह अब राष्ट्रपति बन चुके थे, और अटकलें थी कि भिंडरावाले से संपर्क में भी थे। लोंगोवाल ने पहले ही घोषणा कर दी थी कि मंदिर प्रांगण में पुलिस को घुसने की इजाजत नहीं है, तो आख़िर कैसे पता लगता कि DIG को गोली किसने मारी।

ऐसा भी नहीं कि प्रयास नहीं चल रहे थे। 2014 में लंदन में एक खुलासा हुआ। वहाँ प्रधानमंत्री मार्ग्रेट थैचर के कुछ गुप्त काग़ज़ात मिले। भिंडरावाले को पकड़ने के लिये ब्रिटिश कमांडो SAS

और भारत की गुप्तचर संस्था RAW के मध्य एक योजना बन रही थी। इसके तहत कमांडो सीधे भिंडरावाले के गुरु नानक छात्रावास में रात को उतरते और उन पर हमला करते। इस की तैयारी उत्तर प्रदेश के सरसवा में चल रही थी, जहां कमांडो यह रिहर्सल कर रहे थे। RAW के मुखिया रहे रमेश्वर नाथ काओ खुद इसकी देख-रेख कर रहे थे। स्वर्ण मंदिर की पूरी रेकी भी कर ली गयी थी। यह ऑपरेशन संडाउन (sundown) कहा जाने वाला था। लेकिन जब इंदिरा गांधी को बताया गया की इस दौरान सिविलीयन भी मारे जा सकते हैं, तो उन्होंने मना कर दिया।

उन्ही दिनों स्वर्ण मंदिर में एक आयोजन हुआ जिसमें भिंडरावाले ने गांधी का मजाक उड़ाते कहा, “हमारे बापू गुरु गोविंद सिंह तीर-धनुष और तलवार लेकर घूमते थे; इन लोगों का बापू बस एक पतली लाठी लेकर घूमता था।”

लोंगोवाल यह सुन कर कुछ आहत हुए। वह अब तक पंजाब को भारत का हिस्सा मानते थे। गांधी के प्रति भी सम्मान था, और उनकी मंशा अहिंसक आंदोलन की ही थी। उस दिन के बाद से लोंगोवाल का राजनैतिक करियर मंद पड़ने लगा। अब सभी युवा भिंडरावाले को ही सुनते थे। लोंगोवाल स्वर्ण मंदिर के पास ही एक कमरे में छुप कर रहने लगे। भिंडरावाले के सामने उनकी कोई हैसियत नहीं रही।

और कोई चारा भी नहीं था। जो भी सर उठाता, उसका सर कलम कर दिया जाता। अगस्त-सितंबर, 1983 में स्वर्ण मंदिर के आस-पास के नालों में पाँच लाशें मिली।

इस मध्य कश्मीर में सिख उग्रवादियों की ट्रेनिंग भी शुरू हो गयी थी। खबर थी कि मेजर जनरल शाहबेग सिंह एक सैन्य हमले के लिये तैयारी कर रहे हैं।

28 सितंबर, 1983 को जगराँव में सुबह टहलने निकले हिन्दुओं को गोली से मार दिया गया। ठीक एक हफ्ते बाद 5 अक्तूबर को कपूरथला में एक बस रोकी गयी। वहाँ हिन्दुओं को अलग कर बेरहमी से गोली मार दी गयी।

पत्रकार तवलीन सिंह इस हत्याकांड के बाद भिंडरावाले का साक्षात्कार लेने पहुँची। भिंडरावाले ने कहा, “मुझे क्या पता?”

जब तवलीन सिंह ने कहा कि आप काम से कम घटना की निंदा तो करिए, लोग आपकी सुनते हैं। उन्होंने जवाब दिया, “मैं कौन होता हूँ निंदा करने वाला।”

अगले ही दिन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने पंजाब में राष्ट्रपति शासन की घोषणा कर दी। मुख्यमंत्री दरबारा सिंह पदच्युत हुए, राष्ट्रपति ज्ञानी जैल सिंह का पंजाब पर राज लौटा।

राष्ट्रपति शासन

अब यह भिंडरावाले बनाम भारत युद्ध बनता जा रहा था। इंदिरा गांधी ने राष्ट्रपति शासन लगाते ही भैरब दास पाण्डेय को राज्यपाल बना कर, और डी. आइ. जी. प्रीतम भिन्डर को पुलिस चीफ बना कर भेजा। भैरब दास वरिष्ठ सिविल सर्विस अधिकारी थे, ईमान के पक्के। वही भिन्डर ने आज तक गांधी परिवार की वफ़ादारी निभायी थी और खूँखार अफसर थे। इमरजेंसी के समय इनकी ज्यादतियों की चर्चा मैंने जेपी पर लिखी पुस्तक में की है। यह भी पहले लिख चुका हूँ कि 1980 के चुनाव में भिंडरावाले ने भिंडर की पत्नी का चुनाव में समर्थन किया था। अब भिंडरावाले के किसी भी साथी को शक के आधार पर गोली मारने के आदेश थे। लेकिन, भिंडरावाले इन सब से बिल्कुल ही नहीं डरे।

राष्ट्रपति शासन लगते ही जालंधर में भिंडरावाले के एक विरोधी सिख को गोली मार दी गयी। स्वर्ण मंदिर के अंदर एक ASP रैंक के अधिकारी की पिटाई की गयी। एक कलकत्ता से कश्मीर जा रही ट्रेन को पटरी से उतार दिया गया, जिसमें 19 लोगों की जानें गयी। आखिर वह अपराध भी दोहराया गया, जिसकी वजह से राष्ट्रपति शासन लगा था। 18 नवंबर, 1983 को एक बस रोक कर चार हिन्दुओं को बेरहमी से गोली मार दी गयी।

अब भिंडरावाले के गिरफ्तारी की चर्चा हो रही थी, लेकिन यह कठिन था क्योंकि पंजाब का एक बड़ा तबका उनके साथ था। आखिर, वह सबसे शक्तिशाली धर्मगुरू थे। वहीं, भिंडरावाले ने यह संभावना दिखा कर सबको राजी कर लिया कि अब उनका छात्रावास में रहना सुरक्षित नहीं। अब उनके लिये एक ही सुरक्षित जगह है— अकाल तख्त। यानी, स्वर्ण मंदिर के प्रांगण में।

अकाल तख्त सिखों का सबसे पवित्र स्थान है। वहाँ एक कमरे में गुरु ग्रंथ साहब रखा जाता है। ऐसे पवित्र स्थान पर बंदूक और राइफल लिये भला किसी को कैसे रहने दिया जाए? पहले तो वहाँ के जत्थेदार ज्ञानी किरपाल सिंह ने ही उसका विरोध किया। लेकिन, आखिर सियासत फिर शुरू हुई।

लोंगोवाल बनाम भिंडरावाले!

लोगोंवाल ने भिंडरावाले से लड़ने के लिये एक चरमपंथी संगठन बब्बर खालसा को अपनी रक्षा के लिये बुलाया। बब्बर खालसा के जत्थेदार सुखदेव सिंह अपना दल-बल लिये भिंडरावाले के गुरु नानक छात्रावास पहुँच गए, और उनको धमकाया। ऐसे वक्त में गुरचरन सिंह तोहरा ने ज्ञानी किरपाल सिंह को मना लिया कि भिंडरावाले अब बाहर सुरक्षित नहीं, उन्हें मंदिर में ही रहने दिया जाये।

अकाल तख्त के तीसरी मंजिल पर बने कमरे में भिंडरावाले का नया ठिकाना बन गया। वहाँ बाहर उनके अंगरक्षक तैनात रहने लगे। वह प्रतिदिन जब स्वर्ण मंदिर का लंगर लगता, वहाँ भी पहुँचते। वहीं लंगर हॉल में उनका दरबार भी लगता, जिसमें भारत और हिन्दुओं के खिलाफ जहर उगलते। ये नफ़रत से भरे ऑडियो-टेप भी खुले-आम मंदिर प्रांगण में मिल रहे होते, और सिखों के

घर-घर पहुँच जाते।

वह इन भाषणों में कहते, “सिखों की जान जाती है, तो कोई जाँच नहीं होती। जब हिन्दुओं की जान जाती है, ये जाँच कमिटी बिठा देते हैं। हमें गुलाम का दर्जा दे रखा है इन हिन्दुओं ने। याद रखो की कैसे हमारे गुरुओं ने लड़ कर अपना हक़ हासिल किया है। कैसे इज़राएल ने अरब देशों को धमका कर रखा है। हमें भी ऐसी फ़ौज बनानी होगी।”

यह दरबार जहाँ लगता, वह खुली छत थी। उस वक्त अगर आस-पास किसी भी इमारत से पुलिस एक स्नाइपर लगाती, तो भिंडरावाले को एक झटके में मारा जा सकता था। लेकिन, यह मसला बस टलता ही चला गया।

भिंडरावाले ने यह भी कहा कि हर गाँव में एक मोटरसाइकल और तीन रिवॉल्वर जरूर रखे जाएँ। यह खालसा की रक्षा के लिये है। यह खुले-आम आतंकवाद की फ़ैक्टरी बनाने की बात थी।

26 जनवरी, 1984 को स्वर्ण मंदिर के पास एक इमारत पर खालिस्तान का झंडा ही लहरा दिया गया। उसी दिन अकाली दल ने संविधान के आर्टिकल 25 में संशोधन की माँग रखी। इस आर्टिकल के अनुसार सिखों, जैन, और बौद्ध को हिन्दुओं का हिस्सा बताया गया था। अकाली दल सिखों को इस ब्रैकेट से अलग करना चाहती थी। प्रकाश सिंह बादल ने संविधान की प्रतियाँ जलाने की बात कह दी, और गिरफ्तार किये गये।

वहीं दूसरी ओर हरियाणा के मुख्यमंत्री भजन लाल ने फ़रीदाबाद में एक भड़काऊ भाषण दे दिया कि हम हिन्दुओं का धैर्य अब जवाब दे रहा है। उसके बाद पानीपत में गुरुद्वारा जला दिया गया और आठ सिखों को मौत के घाट उतार दिया गया। पंजाब में भी पवन कुमार नामक एक अपराधी नेता के नेतृत्व में हिन्दुओं ने सिखों पर आक्रमण किया और दंगों में चौदह लोग मारे गए।

बदले में भिंडरावाले के लोग स्वर्ण-मंदिर के बाहर पुलिस चौंकी से छह पुलिस कॉन्स्टेबलों को खींच कर अकाल तख़्त ले आए, और एक को गोली मार दी। आखिर एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी को भिंडरावाले के सामने गिड़गिड़ाना पड़ा, तब जाकर उन्हें छोड़ा गया। लेकिन भिंडरावाले ने सभी स्टेन-गन और वाकी-टॉकी पर कब्जा कर लिया।

आखिर स्वर्ण-मंदिर पर आक्रमण का माहौल बनने लगा। पहली झड़प CRPF के जवानों से हुई। वे मंदिर प्रांगण के बाहर कुछ सिखों की तलाशी कर रहे थे, जब भिंडरावाले के लोगों ने गोली चला दी। बदले में इन CRPF वालों ने भी फायरिंग कर दी।

लोंगोवाल ने पुलिस चीफ भिंडर को फोन किया कि स्वर्ण मंदिर पर गोली चल रही है। भिंडर ने कहा कि वह कुछ नहीं कर सकते, सब केंद्र सरकार के हाथ में है। आखिर एक फोन आया, तो गोलीबारी रुकी। फोन सीधे राष्ट्रपति भवन से आया था। ज्ञानी जैल सिंह का!

28 मार्च, 1984 को दिल्ली गुरुद्वारा प्रबंधन कमिटी के जत्थेदार एच. एस. मनचन्दा को दिन-दहाड़े दिल्ली के केंद्र में ITO चौराहे पर गोली मार दी गयी। उन्हें इंदिरा गांधी का मित्र समझा

जाता था, और भिंडरावाले की हिट-लिस्ट में थे।

ठीक एक हफ्ते बाद अमृतसर में भाजपा के सबसे प्रखर नेता हरबंस लाल खन्ना की गोली मार कर हत्या कर दी गयी। वह हिन्दुओं को सिखों के ख़िलाफ़ भड़काने के लिये नियमित भाषण देते रहे थे। उनकी हत्या के बाद दंगे भड़कने की पूरी संभावना थी, इसलिए पंजाब-हरियाणा में जगह-जगह कर्फ्यू लगा दिये गए।

अगले ही दिन साहित्य अकादमी पुरस्कृत लेखक और कांग्रेस सांसद वी. एन. तिवारी चंडीगढ़ में मॉर्निंग-वाक पर निकले, और उनको गोली मार दी गयी।

लेकिन, एक जंग और चल रही थी। बूढ़े शेर लोंगोवाल अब भी भिंडरावाले के खिलाफ अपनी ताकत लगा रहे थे। छुप-छुप कर।

लोंगोवाल बनाम भिंडरावाले

14 अप्रेल, 1984

भिंडरावाले के ख़ास सहयोगी और सबसे काबिल शूटर सुरिंदर सिंह सोधी रोज की तरह मंदिर के बाहर चाय पीने निकले। सोधी ने ही मनचन्दा, हरबंस लाल खन्ना और वी. एन. तिवारी की हत्या में मुख्य भूमिका निभायी थी। उसको छूने की भी किसी में हिम्मत नहीं थी। वह बड़े आराम से बेंच पर बैठ कर चाय पी रहा था।

एक सिख युगल उसके सामने आकर बैठ गया। सोधी को उन पर कोई शक नहीं हुआ। शादी-शुदा लोग थे, उन पर कैसा शक?

तभी महिला ने रिवॉल्वर निकाला, और सोधी पर धड़ा-धड़ गोलियाँ दाग दी। सोधी वहीं ढेर हो गया। ये दोनों लोंगोवाल के भेजे लोग थे— सुरिंदर सिंह (चिंदा) और बलजीत कौर।

इतना ही नहीं, हत्या के बाद बलजीत कौर मंदिर के अंदर सीधे भिंडरावाले के पास भागी।

वहाँ जाकर कहा, “मुझसे बहुत बड़ी ग़लती हो गयी। मैंने आपके आदमी को मार दिया।”

भिंडरावाले शांत रहे। पूछा, “क्यों मारा?”

“वह मुझसे छेड़-छाड़ कर रहा था। मेरे पति ने टोका तो लड़ने लग गया।”

भिंडरावाले स्त्रियों से छेड़खानी के सख्त खिलाफ थे।

उन्होंने कहा, “ऐसी बात है तो तुमने बिल्कुल ठीक किया। लेकिन, तुम सच कह रही हो? अगर झूठ निकला, तो तुम्हें इसकी सजा भी मिल सकती है।”

यह सुन कर वह बिफर कर रोने लगी।

उसने कहा, “यह सब मेरे पति की ग़लती है। इसमें मेरा कोई हाथ नहीं।”

“उसने क्या किया?”

“उसे लोंगोवाल, गुरुचरण (सिंह) और भाटिया ने पैसे दिये”

“कौन भाटिया?”

“मलिक सिंह भाटिया”

मलिक सिंह भाटिया भिंडरावाले के ख़ास आदमी थे। उनको अगले दिन बुलवाया गया। मलिक सिंह आते ही भिंडरावाले के चरण में गिर गए।

उन्होंने कहा, “मुझे माफ कर दो। मैं लोंगोवाल के झाँसे में आ गया। मैंने बस इनके लिये जीप भेजी थी।”

भिंडरावाले ने कहा, “कोई बात नहीं। मुझसे माफी माँग ली। अब मंदिर जाकर वहाँ भी दरबार में माफी माँग लो।”

भाटिया खुश होकर मंदिर चले गए, और प्रसाद लेकर वापस भिंडरावाले के पास लौटने लगे। लेकिन जैसे ही अकाल तख्त की सीढ़ियाँ चढ़ने लगे, उन पर तलवार से वार किया गया। उनके कंधे कट गए, पगड़ी गिर गयी और वह मंदिर से बाहर लोंगोवाल के गुरु रामदास हॉस्टल की ओर भागे। हॉस्टल के दरवाजे पर पहुँचते ही उनकी पीठ पर गोली लगी, और भाटिया ने वहीं दम तोड़ दिया।

जिस चाय वाले की दुकान पर सोधी को गोली मारी गयी थी, उसे भी गोली मार दिया गया। अगली शाम चिन्दा और उसकी पत्नी बलजीत कौर की लाश भी पुलिस को ग्रैंड ट्रंक रोड पर बोरियों में पड़ी मिली।

स्वर्ण-मंदिर के बाहर एक सूचना-पत्र टंग गया। लिखा था, “चौबीस घंटे के अंदर हमने सभी हत्यारों और उनके साथियों को खत्म कर दिया है।”

लोंगोवाल और गुरचरण सिंह (अकाली दल सचिव) डर कर हॉस्टल में छुप गए। फिर कभी निकलने की हिम्मत नहीं की। अंत में, भारतीय सेना ही उनको हॉस्टल से निकाल पायी।

22 अप्रेल को एक वायुसेना अधिकारी की घर में घुस कर हत्या कर दी गयी। ऐसा भारतीय इतिहास में पहली बार हुआ था कि किसी कार्यरत सैनिक की अपने घर में ही हत्या की गयी हो। इस हत्या के बाद ही यह योजना बनने लगी कि भारतीय सेना को अब अमृतसर लाया जाए।

जब भिंडरावाले के सहयोगी अमरीक सिंह जेल गए थे, तो उनको एक बचन सिंह नामक पुलिस अफसर ने यातनाएँ दी थी। 30 अप्रेल, 1984 को बचन सिंह एक रिक्शे पर अपने अंगरक्षक के साथ जा रहे थे, जब उनके अंगरक्षक से बंदूक छीन कर उनको गोली मार दी गयी। इतना ही नहीं, उनके पीछे रिक्शा पर आ रहे पत्नी और बच्चे को भी गोली मार दी गयी।

सिर्फ मार्च-अप्रेल, 1984 के दौरान अस्सी हत्याएँ की गयी! अब इंदिरा गांधी की सरकार पर से ही लोगों का भरोसा उठ गया था। अगले साल चुनाव थे और उनकी हार तय थी।

भिंडरावाले को यह आशंका हो रही थी कि सरकार चुप नहीं रहेगी। कम से कम चुनाव से पहले आक्रमण जरूर करेगी। इसलिए अकाल तख्त में क़िलाबंदी शुरू कर दी गयी। रेत की बोरियाँ लगा कर घेर लिया गया। अब अकाल तख्त की छत पर बंदूकें लिये लोग तैनात रहते। अकाल तख्त के दोनों तरफ के मकान में भी बंदूकधारी लगा दिये गये। ग्रेनेड की एक पूरी फ़ैक्टरी ही तैयार कर ली गयी थी। ताज्जुब की बात है कि स्वर्ण-मंदिर अब भी आध्यात्मिक माहौल के साथ यथावत था। दूर-दूर से माथा टेकने यहाँ लोग आ रहे थे। उनको इन बंदूकधारियों से कोई फर्क नहीं पड़ता।

अमृतसर की प्रशासन भी गुप्त रूप से भिंडरावाले के साथ थी। कई वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों से लेकर डिप्टी कमिश्नर तक। तभी तो ट्रक भर-भर कर आराम से हथियार स्वर्ण-मंदिर लाए जा रहे थे। कोई रोक-टोक नहीं।

पूरे पंजाब से हिन्दुओं का पलायन शुरू हो रहा था, और हरियाणा के मुख्यमंत्री भजन लाल उनका स्वागत भी कर रहे थे। धारणा तो यह बनने लगी थी कि अगर यही हालात रहे तो अगले साल तक पंजाब में एक भी हिन्दू नहीं बचेगा। जो हिन्दू पलायित नहीं हो सकते थे, सिख बनते जा रहे थे।

लोंगोवाल अब भी आखिरी कोशिशें कर रहे थे। उन्होंने पाँच जत्थेदारों से एक हुक्मनामा लिखवाया कि स्वर्ण-मंदिर प्रांगण से यह गोली-बारी बंद की जाए। कथित तौर पर, भिंडरावाले ने उनमें से तीन जत्थेदारों को ही गोली से उड़वा दिया, जिनमें एक अस्सी वर्षीय ज्ञानी प्रताप सिंह भी थे। हुक्मनामा कभी जारी ही नहीं हो पाया। बल्कि स्वर्ण-मंदिर के जत्थेदार ज्ञानी साहिब सिंह ने भिंडरावाले के छह शिष्यों की शादियाँ भी उसी अप्रेल के महीने में मंदिर प्रांगण में करायी।

12 मई, 1984 को पंजाब केसरी के नए मालिक रमेश चंदर (लाला जगत नारायण के बेटे) को जलंधर में गोली मार दी गयी। पिता के हत्या से पुत्र की हत्या तक मृत्यु की घड़ियाँ भिंडरावाले की मर्जी से चल रही थी।

इंदिरा गांधी हार गयी। शब्दश:। पंजाब में भी, और मलीहाबाद में भी।

राजनीतिक मोड़

21 मई, 1984

मलीहाबाद दशहरी आमों के लिये मशहूर है। पंजाब के गरम माहौल से दूर कुछ देर मलीहाबाद चलते हैं, और आमों की खुशबू लेते हैं। माहौल वहाँ भी गरम ही था। उपचुनाव हो रहे थे, और इस बार कांग्रेस (इंदिरा) के सामने था राष्ट्रीय संजय मंच। यह किसी ने कल्पना भी नहीं की होगी कि कभी इंदिरा गांधी के विरोध में संजय गांधी का नाम होगा। लेकिन, यह हो रहा था। मेनका गांधी की यह नयी-नवेली पार्टी इससे पहले दिसंबर 1983 में पीलीभीत में मात दे चुकी थी। अब मलीहाबाद की बारी थी।

मेनका की पार्टी से प्रत्याशी थे अमेठी के एक दलित ग्राम प्रधान बृज लाल। उनके खिलाफ खड़ी थी कांग्रेस (इंदिरा) की शांति कुरील। इंदिरा गांधी ने अपनी पूरी ताकत झोंक दी थी। उत्तर प्रदेश के 36 विधायक और 6 केंद्रीय मंत्री उस क्षेत्र में कैम्पेन कर चुके थे। मुख्यमंत्री श्रीपत मिश्रा दो बार हेलीकॉप्टर से दौरा कर चुके थे। साम, दाम, दंड, भेद सभी अपनाए जा रहे थे। ठाकुर गाँवों में ठाकुर नेता, मुसलमानों गावों में मुसलमान नेता, तो दलित गाँवों में पासी जाति के नेता कैम्पेन

करते।

वहीं, मेनका गांधी स्वयं उन धूल-धूसरित रास्तों पर जीप से घूम-घूम कर प्रचार कर रही थी। खालिसपुर गाँव में वह घुटनों तक पानी में चल कर पहुँची। यह वो गाँव था जिसने पुल न बनने की वजह से 1980 का चुनाव बहिष्कार कर दिया था। मेनका के सहयोगी अकबर 'डम्पी' अहमद भी अपने दल-बल के साथ मौजूद होते। दम-खम में भी मेनका गांधी की पार्टी कम नहीं थी। बल्कि, उन्हें तो गुंडों की पार्टी कहा ही जाता था। कांग्रेस की जीप राइफलों से लद कर दबंगई दिखाने जा रही थी, मेनका की पार्टी के लोगों ने दो राइफल छीन लिये।

हर जगह पोस्टर लगे थे— 'मेनका तुम तस्वीर हो, कल के हिंदुस्तान की'।

सात हज़ार से अधिक वोटों से बृज लाल चुनाव जीत गए! अगले साल लोकसभा चुनाव थे। मेनका गांधी की लगातार जीत से राजीव गांधी का नेतृत्व हिल गया। ख़ास कर जब पंजाब में उनका थिंक-टैंक पूरी तरह हार गया था।

अक्सर इस कोण की चर्चा नहीं होती, लेकिन इंदिरा गांधी ने अगर स्वर्ण मंदिर में सेना भेजने का फैसला किया, उसकी एक वजह मेनका गांधी से हार भी थी। उन्हें अब पुन: 'आयरन लेडी' और दुर्गा जैसी उपमाएँ पानी थी, और इसके लिये भिंडरावाले का अंत करना जरूरी था। लेकिन, उन्हें भी नहीं मालूम था कि यह इतना आसान न होगा। भिंडरावाले उनके जीवन के सबसे कठिन शत्रु साबित होंगे। ऐसे शत्रु जिनसे उनकी अपनी मृत्यु भी जुड़ी होगी। इन दोनों के अंत के बाद ही आखिर राजीव गांधी का राज्याभिषेक संभव होगा, और मेनका गांधी लंबे समय के लिये नेपथ्य में चली जाएंगी।

खैर, अभी पंजाब लौटते हैं। इंदिरा गांधी ने अंतिम प्रयास किया कि बात-चीत से मामला सुलझ जाये। इसके लिये इस बार उन्होंने अपने एक कुशल कूटनीतिज्ञ नेता को काम पर लगाया। वह थे विदेश मंत्री पी. वी. नरसिम्हा राव। उन्होंने अकाली दल नेताओं से बात की, और यह निर्णय लिया कि उनकी कुछ शर्तें मान ली जाएंगी बशर्ते कि संत भिंडरावाले राजी हो जायें।

लेकिन भिंडरावाले से बात करेगा कौन?

गुरचरण सिंह तोहरा अब भी भिंडरावाले के करीब थे। लोंगोवाल से तो छत्तीस का आँकड़ा था। अकाली दल के तीनों नेता (बादल, तोहरा और लोंगोवाल) स्वर्ण मंदिर प्रांगण में मिले और निर्णय हुआ कि संत से बात की जाये। अगले दिन तोहरा अकाल तख्त पहुँचे।

उन्होंने भिंडरावाले को कहा, "संत जी! सरकार ने हमें चंडीगढ़ देने का वादा कर दिया है। धीरे-धीरे बाकी शर्तें भी मान ली जायेगी।"

"तो आप सरकार के साथ मिल गये?"

"आखिर हमारी शर्तें भी तो मान ली है।"

“आप आनंदपुर साहिब में लिये फैसले भूल गये? बस एक मुख्यमंत्री की कुर्सी के लिये? सिखों का कुछ नहीं सोचा?”

“मैंने हमेशा सिखों का ही सोचा है। यह मत भूलिये कि आपको यहाँ मैंने ही बिठाया है, और जब चाहे निकाल भी सकता हूँ।”

“मुझे कौन निकालेगा? यह आप जैसे मतलबी नेताओं की जगह नहीं, संतों की जगह है।”

“मैं जत्थेदारों से हुक्मनामा लिखवाऊँगा।”

“यह तो कब से सुन रहा हूँ। अब तक आया तो कोई नहीं। यह याद रखिए कि मेरे साथ वाहेगुरु हैं। हम अपनी जान दे देंगे, लेकिन ईमान कभी गिरवी नहीं रखेंगे।”

तोहरा खाली हाथ लौटे और राज्यपाल को खबर कर दी कि भिंडरावाले नहीं मानने वाले। अब सभी रास्ते बंद हो चुके थे, और एक ही रास्ता बचा था।

अमृतसर के स्वर्ण मंदिर प्रांगण में भारतीय सेना भेजने के निर्णय पर हस्ताक्षर करने के बाद इंदिरा गांधी ने कहा, “मैं अपनी मृत्यु के पत्र पर हस्ताक्षर कर आयी हूँ (I have signed my death sentence)”

(चित्र: लेफ़्टिनेंट जेनरल कुलदीप सिंह बरार, लेफ़्टिनेंट जेनरल के सुंदरजी, और जेनरल ए एस वैद्य)

ऑपरेशन का आग़ाज़

31 मई, 1984

लेफ़्टिनेंट जनरल कुलदीप सिंह बरार मेरठ में इन्फैन्ट्री डिवीजन सँभाल रहे थे। उस दिन उन्हें परिवार के साथ छुट्टियाँ मनाने हिमाचल निकलना था। सभी तैयारियाँ हो चुकी थी। तभी खबर मिली कि फ़ौरन चंडीगढ़ पहुँचना है। वह हड़बड़ी में सीधे चंडीगढ़ के वेस्टर्न कमांड पहुँचे तो मालूम पड़ा कि उन्हें भिंडरावाले के ख़िलाफ़ 'ऑपरेशन ब्लूस्टार' की कमांड लेनी है।

लेफ़्टिनेंट जनरल बरार भिंडरावाले के इलाके से और उन्हीं की जाति के सिख थे। फर्क यह था कि उनकी न दाढ़ी थी, न पगड़ी। भिंडरावाले की नजर में एक काफ़िर। अब इस सिख को अपने धर्म के सबसे पवित्र धर्म-स्थल स्वर्ण मंदिर प्रांगण पर आक्रमण करना था। जाहिर है, यह कार्य इतना आसान न होगा। लेकिन, संभव है कि इसीलिए उन्हें यह ज़िम्मेदारी दी गयी हो, ताकि वह धर्म और कर्म, दोनों की रक्षा कर सकें।

उन्होंने तुरंत बटालियन तैयार करने शुरु किए। उनमें भी कई सिख थे।

उन्होंने कहा, “हम किसी भी धर्म-स्थल को अपवित्र करने नहीं जा रहे। वहाँ जो खून बह रहा है, जो हिंसा हो रही है, उसे खत्म करने जा रहे हैं। हम वह गंदगी साफ करने जा रहे हैं, और हरमंदिर की सेवा करने जा रहे हैं। अगर आप में से किसी को भी लगता है कि यह उनके धर्म के ख़िलाफ़ है, तो आप बेशक पहले कह दें। आप पर कोई कार्रवाई नहीं की जायेगी। निश्चिंत रहें।”

पहली तीन बटालियन में किसी ने मना नहीं किया। चौथे में एक सिख खड़े हुए।

लेफ़्टिनेंट जनरल ने कहा, “कोई बात नहीं जवान। आप बेशक इस ऑपरेशन से मुक्त हो सकते हैं।”

लेकिन, उस सिख ने कहा, “नहीं! मैं बस यह कहने खड़ा हुआ हूँ कि मैं इस ऑपरेशन में आगे जाना चाहता हूँ। आप बस हुक्म करिये।”

वह सिख थे सेकंड लेफ़्टिनेंट रैना, जिनके जौहर के क़िस्से आगे संदर्भ में आएँगे।

अगले दिन 1 जून को, 12.40 बजे, अर्धसैनिक बलों और भिंडरावाले के लोगों के मध्य गोली-बारी शुरू हुई। यह पिछले दो-तीन दिन से चल रही थी, ताकि सेना के आने से पहले भिंडरावाले के ठिकानों का पता लग जाये। फ़ायरिंग स्वर्ण मंदिर के आस-पास की गलियों में चल रही थी। आस-पास के हॉस्टलों और मकानों में आधुनिक अस्त्रों से लैस युवक अर्धसैनिक बलों पर भारी पड़ रहे थे। लगभग सात बजे शाम तक गोलियाँ चलती रही। कई गोलियाँ स्वर्ण मंदिर प्रांगण की दीवालों पर, और लंगर हॉल के दीवाल पर भी लगी ही। मंदिर को बचाना नामुमकिन लग रहा था।

भिंडरावाले ने कहा, “सरकार इस पवित्र मंदिर पर हमला कर रही है। यह हम सिख कभी बर्दाश्त नहीं कर सकते।”

एक पत्रकार सुभाष किर्पेकर ने पूछा, “आपको लगता है कि फौज आने वाली है?”

भिंडरावाले ने कहा, “आयेगी भी तो मंदिर में घुसने की हिम्मत नहीं करेगी। दो साल से तो बाहर CRPF और BSF वाले बैठे ही हैं। वैसे ही बैठी रहेगी।”

बी.बी.सी. के सतीश जैकब ने एक बार पूछा, “अगर फौज अंदर आ गयी, तो आप क्या करेंगे?”

उन्होंने लंगर की छत से खेतों की ओर इशारा कर कहा, “हम इन खेतों के रास्ते सीमा पार कर लेंगे, और पाकिस्तान से छापा-मार लड़ाई लड़ते रहेंगे।”

इस बात के पुख़्ता सबूत नहीं मिले, लेकिन सेना यही कहती रही कि पाकिस्तान के इस योजना की खबर उन्हें मिलने लगी थी। बल्कि 10 जून, 1984 को पाकिस्तान द्वारा खालिस्तान देश की घोषणा की अटकलें चल रही थी।

पत्रकार ने आगे पूछा, “लेकिन, क्या आप इतनी बड़ी सेना का मुक़ाबला कर पायेंगे?”

भिंडरावाले ने कहा, “भेड़ सैकड़ों होते हैं। लेकिन, शेर अकेला ही काफी है।”

“अगर आपकी मृत्यु हो गयी तो?”

“सिख मौत से नहीं डरता। जो डरता है, वह सिख नहीं।”

शाहबेग सिंह भिंडरावाले से अधिक प्रायोगिक जवाब दे रहे थे। वह लंबा समय भारतीय सेना में बिता चुके थे, तो उन्हें अनुभव था।

उन्होंने कहा, “आज रात तक फौज आ जानी चाहिये।”

उनकी बात सच निकली। फौज अमृतसर आ चुकी थी। बल्कि जब ये लोग बात कर रहे थे, उस वक्त लेफ़्टिनेंट जनरल बरार स्वयं एक भक्त के भेष में मंदिर की परिक्रमा करते हुए भिंडरावाले की ताक़त का जायज़ा ले रहे थे!

यह बहुत ही नाज़ुक वक्त था। धार्मिक रूप से भी। सुबह गुरु अर्जुन देव की शहीदी मनाने के लिये सैकड़ों सिख, मंदिर के आस-पास इकट्ठे होने लगे थे। यह उनका पवित्र पर्व था, और मंदिर के आस-पास शरबत बँट रहे थे, चहल-पहल थी। यूँ लग ही नहीं रहा था कि यहाँ कुछ ही देर में फ़ायरिंग शुरू होने वाली है और उन निर्दोष भक्तों की जान भी खतरे में है।

जान तो अमृतसर के बाहर भी ख़तरे में थी!

राहुल और प्रियंका गांधी को देहरादून के स्कूल से वापस बुला लिया गया, क्योंकि अब उनका परिवार कहीं भी असुरक्षित था। इंदिरा गांधी को यह आशंका तो थी कि वह अब मारी जायेंगी, लेकिन यही मना रही थी कि परिवार बच जाये।

2 जून की रात 8 बजे दूरदर्शन और आकाशवाणी पर एक साथ घोषणा की गयी कि प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी आधे घंटे के बाद देश के नाम संदेश देंगी। पूरे देश को अब यह अंदेशा था कि कुछ बड़ा निर्णय लिया जा चुका है!

इंदिरा गांधी ने रेडियो पर कहा, “अब पंजाब में चल रहे आंदोलन अकाली दल के हाथ में नहीं रहे, वह कुछ सांप्रदायिक लोगों के हाथ में जा चुके हैं जो उस देश को तोड़ना चाहते हैं। हम समझौते के लिये तैयार हैं, लेकिन हिंसा अब बिल्कुल नहीं बर्दाश्त कर सकते। मैं सभी पंजाबी भाइयों और बहनों से अनुरोध करूँगी कि खून न बहाएँ, नफरत बह जाने दें।”

इस घोषणा के बाद ही भिंडरावाले के सहयोगियों में लगभग दो सौ युवक मंदिर से भाग लिये। कहा जाता है कि ये वामपंथी नक्सल थे, जो धर्म की वजह से यूँ भी भिंडरावाले से नहीं जुड़े थे। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि ये अमृतसर के बाहर दंगे करने निकले थे।

यह तो कॉमन-सेंस भी कहता है कि गुरु अर्जुन देव के बलिदान-दिवस के दिन ऑपरेशन ब्लू-

स्टार की शुरुआत करना एक बेवकूफ़ाना फ़ैसला था। कोई भी सिख इसे माफ़ नहीं करेगा। खबर थी कि यह बकवास ख़्याल राजीव गांधी के अपरिपक्व सलाहकारों की दिमागी उपज थी।

2 जून का पवित्र दिन ही क्यों चुना? सरकार की तरफ से कई दलीलें थी। उनका कहना था कि इस महत्वपूर्ण बलिदान दिवस पर भिंडरावाले सिखों को भड़का कर पूरे पंजाब में दंगे करवाने वाले हैं। उन्होंने भिंडरावाले और शाहबेग सिंह के बीच एक बातचीत रिकॉर्ड की थी, जिसमें 5 जून से कत्ल-ए-आम करने की बात कही गयी थी। सरकार का तो खैर यह भी कहना था कि पंजाब के सभी विधायकों और सांसदों को मौत के घाट उतारने की साजिश चल रही है।

बात पूरी तरह ग़लत नहीं थी। इंदिरा गांधी के टी.वी. पर आने से पिछले चौबीस घंटों में 23 हत्यायें हुई थी!

भिंडरावाले ने अपने आखिरी लाइव साक्षात्कार में भावपूर्ण मुद्रा में उस दिन कहा, "भारत की सरकार सिखों को गुलाम समझती है। वह हमें पसंद नहीं करती। हमें एक-एक कर खत्म करना चाहती है। लेकिन उनका यह मंसूबा कभी पूरा नहीं होगा। सिखों को खत्म करने की कोशिश जिसने भी की, वे खुद खत्म हो गये।"

इंदिरा गांधी भी इस तारीख की अहमियत जानती थी। शायद इसलिए उन्होंने इस महत्वपूर्ण ऑपरेशन की बात राष्ट्रपति ज्ञानी जैल सिंह तक से छुपा ली। एक धर्मनिष्ठ कहे जाने वाले राष्ट्रपति इस ऑपरेशन की इजाज़त तो कभी भी नहीं देते। कितनी अजीब बात है कि जिस राष्ट्रपति को देश की सेना का सर्वोच्च कमांडर कहा जाता है, उन्हें अपनी ही सेना की हलचल की खबर ही नहीं!

"अगर वह पंडिताइन सेना भेजती भी है, तो कोई सिख शामिल नहीं होगा। टोपी वालों (हिन्दुओं) को देखने के लिये तो हम काफी हैं।"
- जरनैल सिंह भिंडरावाले

स्वर्ण मंदिर सिर्फ सिखों के लिये ही नहीं, हर धर्म के लिये पवित्र स्थलों में है। वहाँ पहुँचते ही एक अद्भुत् आध्यात्मिक अनुभव होता है। मुख्य द्वार से प्रवेश कर, संगमरमर की सीढ़ियों और फर्श पर चलते सरोवर के मध्य जब आप वह भव्य मंदिर देखते हैं, आप नतमस्तक हो जाते हैं। परिक्रमा करते हुए यूँ लगता है कि आप अपने तमाम पापों की क्षमा माँग रहे हैं। यह माहौल ही ऐसा है कि कोई भी व्यक्ति कल्पना भी नहीं कर सकता कि यहाँ कोई उग्रवादी बैठा है। सरकारें कुछ भी कहे, आज भी कई सिख भिंडरावाले को 'संत जी' ही मानते हैं। यह बात मैं कई प्रवासी सिखों से बातचीत के आधार पर भी कह रहा हूँ कि स्वर्ण मंदिर में भारतीय सेना का घुसना सदा के लिये सिखों के दिल में एक जख्म दे गया, जो शायद कभी न भर पाये। न सिर्फ सिखों को, बल्कि हर भारतीय को यह दर्द साझा करना चाहिये। ऑपरेशन ब्लूस्टार की रिपोर्ताज़ के पुनर्लेखन से पहले, मेरे भी हाथ काँप रहे हैं क्योंकि उस मंदिर की आब-ओ-हवा हम सबको छू चुकी है।

एक सिख ने कहा, “सिर्फ एक व्यक्ति को पकड़ने के लिये न जाने कितने मासूम सिखों और भक्तों का उस दिन खून बहाया गया। आखिर क्यों?”

इस प्रश्न का उत्तर आखिर कौन दे सकता हैं? शायद, कोई नहीं। अब इन भावनाओं से परे हट कर मैं लिखना शुरू करता हूँ, ताकि कलम लड़खड़ाएँ नहीं।

दो जून को फौज ने स्वर्ण मंदिर प्रांगण को घेरा ज़रूर, लेकिन एक भी गोली नहीं चलायी। उन्हें यह लगने लगा था कि स्वर्ण मंदिर की व्यस्त गलियों में इस लड़ाई को लड़ना सीमा पर लड़ने से कहीं अधिक कठिन है। उस दिन फौज घेराबंदी करती रही, लेकिन भक्त मंदिर आते रहे। परिक्रमा और दरबार साहब में पूजा सामान्य रूप से चलती रही।

3 जून की रात को स्वर्ण मंदिर कृत्रिम रोशनी से सुसज्जित था, जब पहली बार भारतीय सेना ने गोली चलायी। उस वक्त मंदिर प्रांगण के आस-पास के हॉस्टलों में सैकड़ों लोग थे, और अंदर भिंडरावाले। उनको डराने के लिये ही यह गोलियों की आवाज सुनाई गयी होगी। लेकिन, भिंडरावाले इन आवाजों के आदी हो चुके थे। वह चाहते तो भाग सकते थे, लेकिन शाहबेग सिंह ने भरोसा दिला रखा था और यूँ भी उनका भागना कायरता कहलाता। आत्म-समर्पण की संभावना भी न के बराबर थी।

गुरचरण सिंह तोहरा आखिरी बार उस रात को स्वर्ण मंदिर प्रांगण में भिंडरावाले से मिलने गये। उन्होंने देखा कि अकाल तख्त अब पूरी तरह एक सैन्य किले में तब्दील हो चुका है। हर खिड़की और छत पर रेत की बोरियाँ लगा दी गयी हैं, जहाँ से बंदूकें तनी हैं। उनको भिंडरावाले के पास ले जाया गया, जहाँ उन्हें भिंडरावाले ने सरकारी एजेंट कह कर बेइज्जत किया। यह आरोप भी अपनी जगह सही थे। तोहरा और लोंगोवाल अब सरकार के साथ ही थे। उनके मन में हालाँकि यह इच्छा ज़रूर रही होगी कि किसी तरह स्वर्ण मंदिर और अकाल तख्त बच जाये। भले इसके लिये भिंडरावाले के सामने बार-बार घुटने टेकने पड़े।

सेना के पास भी विकल्पों की कमी थी। मसलन हॉस्टलों को खाली नहीं कराया गया। उसमें ठहरे सैकड़ों दर्शनार्थी मशीन-गनों की आवाज सुन कर दुबके पड़े थे। सेना भी चाहती थी की उन्हें बारी-बारी से सुरक्षित स्थान पहुँचाया जाए। लेकिन, रिपोर्ट यह भी कहते हैं कि ऐसी कोई घोषणा उस वक्त नहीं की गयी। शायद उन्हें यह आशंका थी कि इस अफरा-तफरी में कई उग्रवादी भी भाग लेंगे। पहले भी उनके हाथों से छूट कर भाग चुके थे। दूसरी शंका यह थी कि कभी भी गोलियाँ चल जायेगी, और इस भगदड़ में अधिक लोग मारे जायेंगे। सबसे बड़ी आशंका तो यह थी कि अगर इस खबर को सुन कर गाँवों से ट्रक भर कर सिख लड़ने आ गये तो सेना बुरी तरह फँस जायेगी।

ऑपरेशन की पूरी कमांड लेफ़्टिनेंट जनरल सुंदर जी की थी। लेफ़्टिनेंट जनरल बरार उनके अंतर्गत ऑपरेशन संभाल रहे थे। सुंदर जी यह ऑपरेशन जल्द से जल्द चाहते थे, ताकि मामला 24 घंटे के अंदर सुलझ जाये। अमृतसर से कुछ दूर गाँवों में दंगे पहले ही शुरू हो चुके थे, और सुल्तानविंद इलाके में कई हिन्दू दुकानें जलायी गयी थी।

उस 3 जून की रात पंजाब को पूरे देश से काट दिया गया। सड़कें बंद कर दी गयी। फोन लाइन काट दिये गये। हर संचार माध्यम बंद कर दिया गया। ट्रेन, बस, फ्लाइट बंद कर दिये गये। यहाँ तक कि पत्रकारों को बस में बिठा कर हरियाणा छोड़ आया गया। यह जमाना मोबाइल फ़ोन रिकॉर्डिंग का था भी नहीं। इसलिए ऑपरेशन के लाइव विडियो बनाना आसान न था। अधिकतर बातें आज भी सुनी-सुनायी आँखों-देखी रिपोर्ट ही है। सिख इसे अपने ढंग से सुनाते हैं, और सरकार-समर्थक पत्रकारों ने अपने ढंग से लिखा। सेना अफसरों ने भी अपनी कहानी लिखी। किसमें कितना सत्य है, कोई नहीं जानता।

उसी रात सेना ने पंजाब के 37 और गुरुद्वारों को घेर लिया। उन्हें खबर मिली थी कि भिंडरावाले के लोग इन गुरुद्वारों में छुपे हैं। पटियाला गुरुद्वारा में सेना की मुठभेड़ भी हुई जिसमें बीस सिख (कुछ रिपोर्ट के अनुसार 56) मारे गये।

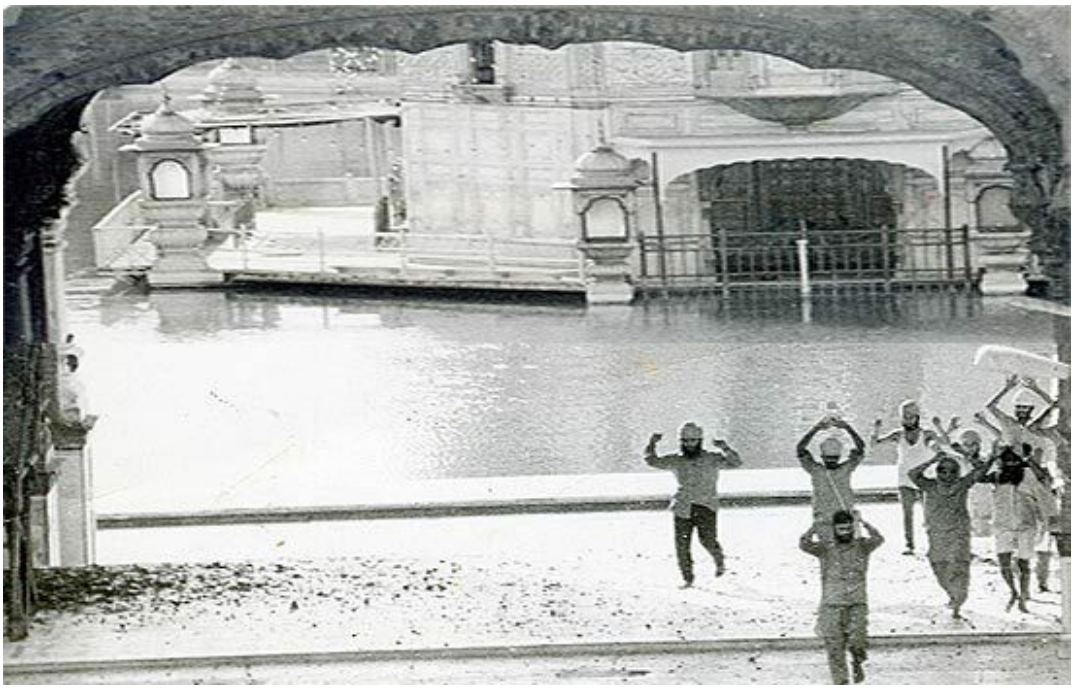

ब्लू-स्टार

5 जून, 1984

“जवानों! यह ध्यान रहे कि यह मंदिर हम सबके लिये एक पूजा करने की जगह है। लड़ने की नहीं। लेकिन, अब हमारे पास कोई चारा नहीं बचा। आज हमें इसे शत्रु-कैम्प की तरह देखने की नौबत आ गयी है। अंदर हमारे देश का दुश्मन भिंडरावाले बैठा है। हमारा टारगेट वही है, मंदिर को हम बिल्कुल क्षति नहीं पहुँचाएँये। मैं दुबारा कह रहा हूँ। स्वर्ण मंदिर और अकाल तख्त को हमें नुकसान नहीं पहुँचाना है!”

- लेफ़्टिनेंट जनरल बरार अपने बटालियनों से

भारतीय सेना के जवान अलग-अलग रेजिमेंट के थे। कोई कुमाऊँ रेजिमेंट का, कोई राजपूत रेजिमेंट का, कोई डोगरा, कोई बिहारी, कोई मद्रासी। कोई सिख, कोई मुसलमान, तो कोई हिन्दू।

बरार खुद घुँघराले, भूरे बालों वाले, बड़े ही आकर्षक फौजी थे। उनके सर पर फौजी टोपी कुछ तिरछी लगी होती, और सेना को वह बिल्कुल सामने से लीड करते। उनके बॉस उस वक्त कृष्णास्वामी सुंदर जी थे, जो दो साल बाद पूरी भारतीय सेना के आर्मी चीफ बनने वाले थे। वह एक काबिल रणनीतिकार और कठोर निर्णय लेने वाले अफसर थे।

तीसरे महत्वपूर्ण व्यक्ति थे लेफ़्टिनेंट जनरल रणजीत सिंह दयाल। उन्होंने 1965 के युद्ध में पाकिस्तान से हाजी पीर दर्रा छीना था। वह पगड़ी और दाढ़ी वाले पक्के धर्मनिष्ठ सिख थे। वह

चौदह साल की उम्र से नियमित स्वर्ण मंदिर में माथा टेकने आते रहे थे, और उनकी सख़्त हिदायत थी कि चाहे कुछ भी हो जाए, कोई भी स्वर्ण मंदिर को बिल्कुल नहीं छूएगा।

लेकिन, यह कैसे मुमकिन होगा?

इसके लिये स्वर्ण मंदिर प्रांगण की संरचना को समझना होगा। जैसा पहले लिखा है कि इसके चार प्रवेश द्वार हैं, केंद्र में सरोवर है, सरोवर के मध्य में स्वर्ण मंदिर है। एक दर्शणार्थी उत्तर दिशा से मुख्य द्वार में प्रवेश करता है, जिसे 'घंटा घर द्वार' भी कहते हैं। वहीं बाहर 'होटल टेम्पल व्यू' है, जिससे मंदिर प्रांगण स्पष्ट दिखायी देता है। साथ ही ब्रह्म बूटा अखाड़ा भी है।

प्रवेश करने के बाद हम सरोवर के किनारे पश्चिम की ओर चलना शुरू करते हैं। वहाँ पश्चिम में अकाल तख्त है, जहाँ उस वक्त भिंडरावाले की क़िलाबंदी थी। अकाल तख्त के ठीक सामने दर्शन ड्योढ़ी है, जहाँ से सरोवर के मध्य में स्थित स्वर्ण मंदिर के लिये पथ बना है।

दक्षिण द्वार पर पुस्तकालय और आटा मंडी है, और पूर्वी द्वार पर स्थित है अकाली दल का कार्यालय, गुरु नानक निवास और अन्य छात्रावास। यहीं पर तमाम दर्शनार्थी और लोंगोवाल के लोग मौजूद थे। पहली योजना तो यही थी कि इनको मंदिर से अलग किया जाये ताकि गोली-बारी में न मारे जायें। हालाँकि यह कठिन था कि तमाम दर्शनार्थियों को उग्रवादियों से अलग किया जाये।

पूर्वी द्वार पर ही दो 80 फीट ऊँचे टावर थे, जिन्हें रामगढ़िया बुंगा कहा जाता है। ये अठारहवीं सदी में बनाये गये थे, और कहा जाता है कि मुगलों का तख्त-ए-ताऊस (सिंहासन) छीन कर यहीं ले आ गया था। इन दो टावरों के ऊपर रेत की बोरियाँ लगाये भिंडरावाले के स्नाइपर मौजूद थे। इनके साथ ही पानी टंकी भी थी, जिस पर स्नाइपर मौजूद थे। जैसे ही कोई कमान्डो मंदिर में दाखिल होता, वे निशाना साध देते। सबसे पहले तो उन्हें ही खत्म करना था।

सेना ने 3.7" हॉवित्जर मंगवाये, और इन टावरों पर निशाना साध दिया। समस्या यह थी कि अगर तनिक भी गड़बड़ी होती तो टावर के बदले पीछे हॉस्टल कॉम्प्लेक्स और साथ ही लंगर हॉल उड़ जाता। बहुत सावधानी से आक्रमण किया गया। तीनों टावर पाँच मिनट में मलबे में तब्दील हो गये। उनमें बैठे स्नाइपर भी मारे गये। संभव है कि इस दौरान कुछ निर्दोष लोग मरे हों।

उसके बाद पूर्वी द्वार पर मंदिर प्रांगण और हॉस्टलों के मध्य APC (आर्म्ड पर्सनल कैरियर) लगा दिये गये, ताकि ये दोनों युद्ध-क्षेत्र (हॉस्टल और मंदिर) अलग हो जायें। लेकिन, कई दर्शनार्थी तो मंदिर प्रांगण में भी मौजूद थे। भिंडरावाले वाले के लोगों ने भी कइयों को रोक रखा था, ताकि सेना हमला न कर सके।

शाम तक यही चलता रहा। सेना के अनुसार, कई सिखों को सुरक्षित स्थान पहुँचाया गया, और मंदिर के सभी छोरों को अच्छी तरह घेर लिया गया। जबकि रिपोर्ट के अनुसार कुल 129 लोग ही मंदिर से बाहर आए, कहना मुश्किल था कि बाकी लोग कहाँ गये।

पाँच जून को शाम 7 बजे आखिर ऑपरेशन ब्लूस्टार पूर्ण रूप से शुरू हुआ। उसके बाद गोली-बारी नहीं रुकी। सबसे पहले सीमा सुरक्षा बल और CRPF के जवानों ने होटल टेम्पल व्यू और ब्रह्मबूटा अखाड़ा कब्जे में कर लिया। इसका अर्थ था कि उत्तरी द्वार यानी मुख्य घंटाघर द्वार का रास्ता पूरी तरह खुल गया।

कुछ कमांडो ने पश्चिमी छोर पर एक गली से सीधे अकाल तख्त में घुसने की कोशिश की। संभवत: वह छत तक भी पहुँच गये। लेकिन, वे मारे गये या उनको भागना पड़ा। फौज भी इस कमांडो ऑपरेशन की चर्चा नहीं करती। मुमकिन है यह RAW के उसी सनडाउन ऑपरेशन के लोग थे, जिनका पिछला ऑपरेशन रोक दिया गया था।

एक ही रास्ता था कि मुख्य द्वार यानी उत्तर से कमांडो घुसें, और जैसे-तैसे अकाल तख्त तक पहुँचें। लेकिन, यह खतरे से खाली नहीं था।

रात 10 बज कर 30 मिनट पर लेफ़्टिनेंट कर्नल इसरार ख़ान के नेतृत्व में कमांडो पहली बार उत्तरी मुख्य द्वार से अंदर घुसे। लेकिन, उनके घुसते ही दूसरी ओर (दक्षिण) से गोलियाँ चलने लगी। वहाँ पुस्तकालय और परिक्रमा में भिंडरावाले के लोग तैनात थे। कई तो नीचे मेन-होल से निकल कर गोलियाँ चला कर कहीं गुम हो जाते। कैप्टन जसबीर सिंह रैना, जो सबसे आगे चल रहे थे, उनको गोलियाँ लगी और वह गिर पड़े। यह वही सिख थे, जिन्होंने कहा था कि स्वर्ण मंदिर की सफाई में सबसे पहले मैं शामिल होना चाहता हूँ। रैना गिरने के बाद भी रेंगते हुये गोली चलाते रहे, लेकिन उन्हें खींच कर वापस बाहर ले आया गया।

लगभग दो घंटे की कोशिश के बाद कुछ कमान्डो दर्शन ड्योढ़ी तक पहुँचे, तो वहाँ बुरी तरह मारे गये। अकाल तख्त से धुआँधार गोलियाँ चलने लगी। सेना अगर ग्रीनेड भी फेंकती, तो वह अकाल तख्त के अंदर गिर ही नहीं पाती। सारे द्वार, सभी खिड़कियाँ रेत की बोरियाँ लगा कर बंद कर दी गयी थी। ग्रीनेड उनसे टकरा कर वापस कमान्डो की तरफ ही गिरते। एक-एक कर कमान्डो मरते रहे और उनका शोणित पवित्र सरोवर में बहता रहा।

एक और पहेली यह थी कि मद्रासी बटालियन दक्षिण के द्वार को भेदने वाली थी, लेकिन उनका कहीं अता-पता नहीं था। शंका थी कि या तो वह कहीं पीछे गलियों में खो गये या मारे गये। दरअसल लेफ़्टिनेंट कर्नल पन्निकर के नेतृत्व में यह बटालियन रामदास सराय के बाहर लगे स्टील दरवाजों को नहीं भेद पा रही थी। वहाँ प्याऊ के पास छिपे उग्रवादी उन पर आक्रमण कर रहे थे। बिहारी बटालियन स्वर्ण मंदिर प्रांगण के बाहरी सुरक्षा बिंदुओं पर पैट्रोलिंग कर रही थी, और वहाँ भी गलियों में गोलियाँ चल रही थी। आखिर कुमाऊँ के गढ़वाली बटालियन दक्षिण द्वार भेदने में कामयाब हुए, और पुस्तकालय की छत तक पहुँच पाये। लेकिन, उनमें भी कई घायल हुये और मारे गये। कुमाऊँ बटालियन की कमांड ब्रिगेडियर दीवान के हाथ में थी, जिन्हें खतरों से खेलने का शौक था। फौज में उन्हें लोग इस फुर्ती के लिये 'चिकेन' बुलाते थे।

जब दक्षिण द्वार पर गढ़वालियों ने जगह बना ली, तब जाकर मद्रासी बटालियन लगभग तीन बजे

सुबह भूले-भटके पूर्वी द्वार पर पहुँचे; और अंधेरे में ब्रिगेडियर दीवान के बटालियन पर ही गोली चलाने लगे।

दीवान चिल्लाये, "डॉन्ट शूट! यू फूल्स! इट्स अस!"

अब पूर्वी, उत्तरी और दक्षिणी द्वार पर सेना काबिज थी, लेकिन अब तक 137 लोग मारे जा चुके थे। पश्चिम में अकाल तख्त अब भी ज्यों का त्यों था।

लेफ़्टिनेंट जनरल बरार को लगने लगा कि यह ऑपरेशन इतना आसान नहीं। शाहबेग सिंह ने ऐसी क़िलाबंदी कर रखी थी, जिसे भेदना लगभग असंभव था।

बरार ने कहा, "मैं अब एक भी फौजी की मौत बर्दाश्त नहीं कर सकता। मुझे सुबह होने तक जीत हर हाल में हासिल करनी है। वरना सूरज निकलते ही, पूरे पंजाब से उग्रवादी यह इलाका घेर लेंगे, और हम बुरी तरह फँस जायेंगे।"

उन्होंने सेना के टैंक बुलवाने का फैसला किया। दिल्ली खबर भेजी गयी, जहाँ इंदिरा गांधी, उप-रक्षा मंत्री के.पी. सिंह देव, और अरुण सिंह पल-पल की खबर मॉनिटर कर रहे थे। कुछ विचार-विमर्श के बाद मंदिर में टैंक भेजने की इजाज़त दे दी गयी।

लेफ़्टिनेंट जनरल बरार के अनुसार यह टैंक बस इसलिये मंगवाया गया, क्योंकि रात हो गयी थी। टैंकों में हैलोजेन लैम्प लगे होते हैं, जिनकी रोशनी से अकाल तख्त में बैठे उग्रवादियों की आँख चौंधिया जाती। इस बीच कमान्डो अंदर घुस जाते। लेकिन, इस कथन पर प्रश्न उठते रहे हैं कि क्या बस हैलोजेन लैम्प के लिये स्वर्ण मंदिर के अंदर टैंक घुसा दिये गये, या यह योजना पहले से थी।

तीन विजयंता टैंक अमृतसर की सड़कों से जालियाँवाला बाग से गुजरते हुए आखिर स्वर्ण मंदिर के पूर्वी द्वार पहुँचे। उन पर भी पूरे रास्ते गोली-बारी होती रही। आखिर टैंकों ने स्वर्ण मंदिर के पूर्वी द्वार पर संगमरमर की सीढ़ियों को रौंदते हुए अंदर प्रवेश किया।

टैंको के अंदर भेजने से ठीक पहले लगभग चार बजे सुबह, पहले एक APC (आर्म्ड पर्सनल कैरेज) अंदर भेजा गया। जैसे ही APC अकाल तख्त के नजदीक पहुँची, भिंडरावाले के लोगों ने एक चीनी रॉकेट प्रोपेलेर से APC को उड़ा दिया। सेना को इसका अंदाज़ा भी नहीं था, कि इनके पास ऐसे खतरनाक अस्त्र मौजूद हैं। ये अस्त्र आये कहाँ से? सीमा पार से?

अब कोई रास्ता नहीं बचा था, सिवाय टैंक से अकाल तख्त उड़ाने के। लेफ़्टिनेंट जनरल बरार का लिया एक वचन टूटने वाला था। पवित्र अकाल तख्त अब ढहने वाला था।

पूर्वी द्वार पर खड़े टैंको को पश्चिम में अकाल तख्त पर बमगोले दागने थे। और केंद्र में था स्वर्ण मंदिर। लेकिन उन टैंकों का निशाना इतना पक्का था कि ताबड़-तोड़ बमगोले चलाये गये, और स्वर्ण मंदिर को संभवत: उससे कम हानि पहुँची। हालाँकि ऑपरेशन खत्म होने तक स्वर्ण मंदिर

में लगभग तीन सौ छर्रों और गोलियों के निशान देखे गये। अकाल तख्त का सामने का हिस्सा पूरी तरह ढह गया। एक खंभा भी नहीं बचा। आश्चर्यजनक रूप से वह कमरा बच गया जिसमें गुरु ग्रंथ साहिब रखा था। उसकी रक्षा कर रहे थे सेवादार हरि सिंह।

जब टैंक से बमबारी शुरू हुई, भिंडरावाले के दायें हाथ अमरीक सिंह उस कमरे में आये और कहा, "आप अब गुरु ग्रंथ साहिब लेकर निकल जाइए। टैंक का मुक़ाबला हम नहीं कर पायेंगे।"

थोड़ी देर बाद भिंडरावाले खुद उस कमरे में आये, वहाँ मत्था टेका, और कहा, "जिन्हें शहीद होना है, मेरे साथ रुक जायें। बाकी लोग निकल जायें।"

वहाँ से निकलते ही पहले अमरीक सिंह सेना की गोली-बारी से ढेर हो गये। कुछ लोग पीछे सीढ़ी लगा कर भागने लगे। इस बात पर द्वंद्व है कि भिंडरावाले और शाहबेग सिंह भागने में कामयाब हुये या नहीं। या फिर थोड़ी देर भागने पर बाहर खड़ी बिहार रेजिमेंट ने उन्हें गोली मार दी। सेना के अनुसार उनकी लाशें अकाल तख्त के अंदर ही मिली। जबकि कुछ लोग मानते हैं कि उन्हें सेना बाद में अकाल तख्त लेकर आयी।

सेवादार हरि सिंह की बात में भी मतभेद है। मंदिर के जत्थेदार ज्ञानी पूरन सिंह के अनुसार गुरु ग्रंथ साहिब उस दिन अकाल तख्त नहीं ले जाया गया। बल्कि, वह उसे स्वर्ण मंदिर में ही लेकर बैठ गये। अगले दिन सेना की गोलियों से गुरु ग्रंथ साहिब में छेद भी हो गया।

अब भी स्वर्ण-मंदिर प्रांगण में और आस-पास गोलियाँ चल ही रही थी। उन्हें खबर नहीं थी कि भिंडरावाले मारे जा चुके।

दूसरी तरफ अलग ही ऑपरेशन चल रहा था। कुमाऊँ रेजिमेंट के लोग जब हॉस्टल कॉम्प्लेक्स पहुँचे तो वहाँ लोंगोवाल और गुरचरण सिंह तोहरा कच्छा-बनियान में पसीने में लथ-पथ बैठे मिले। पानी टंकी उड़ाने के बाद अब उनके पास एक बूँद पानी भी नहीं था। सेना उन्हें बंदी बना कर ले गयी (अन्य संदर्भ के अनुसार भिंडरावाले के लोगों से बचा कर ले गयी)। इस ऑपरेशन के दौरान भी आरोप लगाये जाते हैं कि सेना ने हॉस्टल में अंधा-धुंध गोलियाँ चलायी और कई निर्दोष मारे गये। सुबह वहाँ से लगभग सत्तर लाशें बरामद हुई, जिनमें अधिकतर अकाली दल कार्यकर्ताओं की थी।

उन्हीं हॉस्टलों के मध्य तेजा सिंह समुंदरी हॉल से भिंडरावाले के ख़ास हरमिंदर सिंह संधू को भी गिरफ्तार किया गया। यह वो व्यक्ति थे, जिन्होंने कभी भिंडरावाले के लिये जान देने की बात कही थी। अब यहाँ छुप कर बैठे थे। इन्हीं को रॉ और ISI का डबल-एजेंट 'फाल्कन' भी कहा जाता है। सच क्या है, कोई नहीं जानता।

अब सुबह हो चुकी थी। ब्रिगेडियर दीवान दक्षिण द्वार के बाहर पूरी-सब्जी खा रहे थे, कि तभी पुस्तकालय से स्नाइपर गोलियाँ चलनी शुरू की। वहाँ दूसरी तरफ खड़ी मद्रास बटालियन ने उन पर अंधा-धुंध गोलियाँ चलायी। सेना के अनुसार, मात्र इन तीन स्नाइपर को मारने में उनका पूरा

दिन लग गया, और चार बजे शाम तक ही वे मारे जा सके। इस गोली-बारी में पुस्तकालय के तमाम दुर्लभ ग्रंथ जल कर राख हो गये। कई सिख यह आरोप लगाते रहे हैं कि सेना ने जान-बूझ कर पुस्तकालय में आग लगायी।

पाँच बजे शाम को सेना ने घोषणा की, "अगर कोई भी मंदिर प्रांगण के अंदर मौजूद हों, तो बाहर आ जायें।"

लोग एक-एक कर हाथ खड़े किये बाहर निकलने लगे। लेफ़्टिनेंट जनरल बरार खुद अंदर आकर जाँच कर रहे थे। स्वर्ण मंदिर के अंदर भी सेना ने प्रवेश किया, और तलाशी ली। सेना के अनुसार स्वर्ण मंदिर के अंदर भी उग्रवादी छुपे बैठे थे, और उन पर गोलियाँ चला रहे थे। सेना ने भी जवाबी गोलियाँ चलायीं, जिसमें कुछ जाने गयीं। लेकिन, किसी भी हालत में सेना ने इस अनुशासन का पालन जरूर किया कि स्वर्ण मंदिर का ढाँचा, उसके स्तंभ, उसकी छत सही-सलामत रहे। उन पर जान-बूझ कर कोई भी बमबारी नहीं की गयी।

शाम को सेना अकाल तख्त में पहुँची, और वहाँ की लाशों का मुआयना किया। 7 जून की सुबह ही भिंडरावाले, शाहबेग सिंह और अमरीक सिंह की लाशें अकाल तख्त के एक ध्वस्त कमरे में मिली। उसी संध्या 7 बज कर 39 मिनट पर भिंडरावाले का अंतिम संस्कार सेना द्वारा किया गया। लगभग दस हज़ार सिख बाहर इकट्ठा हो गये थे, लेकिन सेना ने मात्र परिवार वालों को इसमें शामिल होने दिया। भिंडरावाले और अन्य सहयोगियों को वहीं मंदिर के बाहर जला दिया गया। शाहबेग सिंह का परिवार भी वहाँ नहीं पहुँच सका। यह संभव भी नहीं था।

सेना के अनुसार इस ऑपरेशन में कुल 83 फौजी मारे गये, और 249 फौजी घायल हुये। 493 नागरिक मारे गये, जिनमें कई निर्दोष थे। उनकी किस्मत बुरी थी कि वे उस वक्त वहाँ मौजूद थे। ध्यान रहे कि यह संख्याएँ सरकारी हैं, और इसमें अर्धसैनिक बलों की मौतें नहीं गिनी गयी। अंदाज़ लगाया जाता है कि इस ऑपरेशन के दौरान तीन हज़ार से अधिक मौतें हुई, और लाशों को एक साथ हड़बड़ी में जलाया गया।

दरअसल सेना ने भिंडरावाले की ताकत को कम आँका था। लेफ़्टिनेंट जनरल सुंदर जी के अनुसार, उनके पास स्वर्ण मंदिर प्रांगण का पक्का मानचित्र भी था। यह मानचित्र बनाना तो बहुत ही आसान था। कोई भी जासूस प्रांगण में पहले जाकर कोने-कोने की तस्वीर बना सकता था। उन्होंने सोचा कि यह कोई साधारण उग्रवादी होगा, जिसे एक झटके में उड़ा देंगे। लेकिन, भिंडरावाले कहीं अधिक शक्तिशाली निकले। इस इंटेलिजेंस ग़लती का ख़ामियाज़ा सेना ने भी भुगता और तमाम दर्शनार्थियों ने भी।

सेना के एक अफसर ने ही पत्रकार सतीश जैकब को कहा, "अगर ये भिंडरावाले की सेना जैसे बस तीन डिवीजन हमें मिल जाएँ तो हम जिया-उल-हक की पुंगी बजा दें।"

लेकिन अफसोस कि भिंडरावाले की वह मजबूत सेना देश के लिये नहीं, देश के ख़िलाफ़ लड़ रही

थी।

एक भिंडरावाले के मरते ही पंजाब में सैकड़ों भिंडरावाले खड़े होने लगे। इस घटना ने कई प्रगतिवादी सिखों को भी हिला कर रख दिया। ज्ञानी जैल सिंह ने इंदिरा गांधी को बुला कर उन्हें कहा कि इतने बड़े ऑपरेशन की सूचना उन्हें कैसे नहीं दी गयी? कैप्टन अमरिंदर सिंह ने कांग्रेस से ही इस्तीफा दे दिया। यहाँ तक कि इंदिरा गांधी के ख़ास खुशवंत सिंह ने अपने पुरस्कार वापस कर दिये।

राष्ट्रपति जैल सिंह 6 जून को ही स्वर्ण मंदिर पहुँच गये, जब स्नाइपर वहाँ मौजूद ही थे। वहाँ प्रांगण में बिखरी लाशों को देख कर वह रो पड़े। जिस वक्त वह परिक्रमा कर रहे थे, तभी एक गोली उनके साथ चल रहे सैनिक को लगी। ज्ञानी जैल सिंह साथ में दूरदर्शन के कैमरामैन भी ले गये थे, जिन्होंने वहाँ के हालात प्रसारित किये। उन्होंने पहले कहा था कि वह इस्तीफ़ा देने वाले पहले राष्ट्रपति होंगे, लेकिन उन्होंने इस्तीफ़ा नहीं दिया। उन्होंने दूरदर्शन पर आकर सरकार के इस कारनामे की खुल कर निंदा की।

लेकिन, इन सबसे भारी पड़ी एक नाराज़गी। फौजी सिखों का गुस्सा जब उबला, फिर तो विद्रोह छिड़ना ही था। सिख भारतीय सेना के एक बड़े और महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। जब उन्होंने टी. वी. पर स्वर्ण मंदिर में अश्रुपूरित आँखों के साथ मुआयना करते ज्ञानी जैल सिंह को देखा, उनमें से कुछ का खून खौल गया।

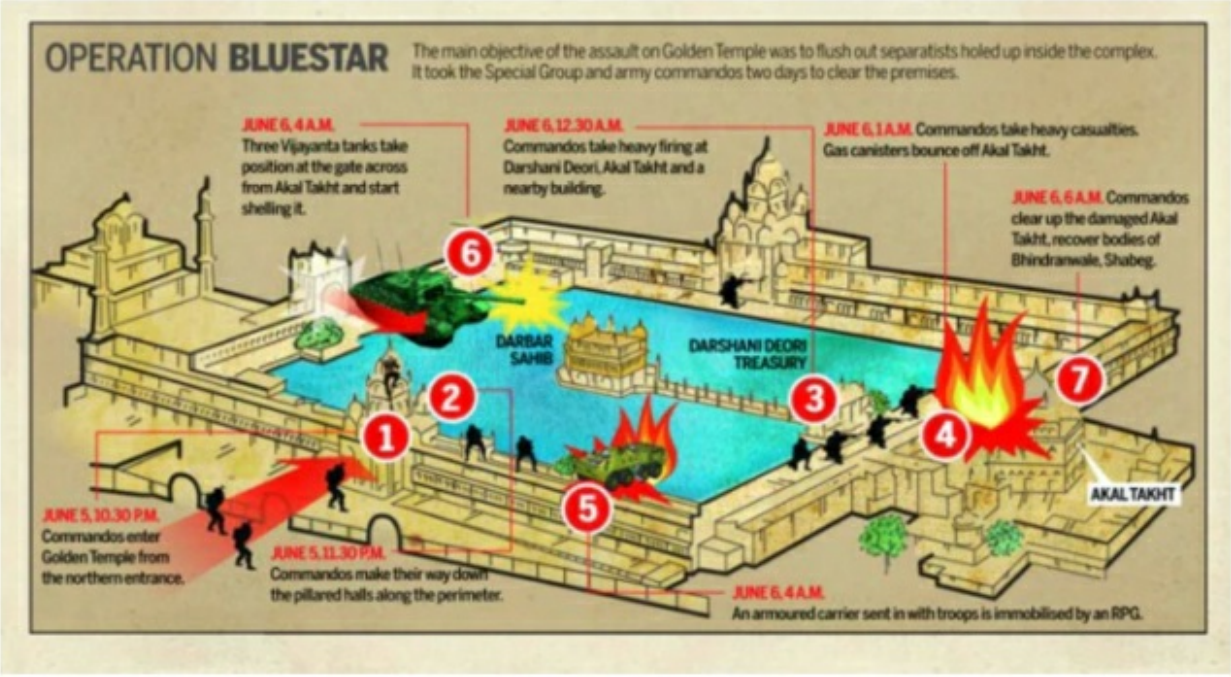

(स्रोत - इंडिया टुडे आर्काइव)

(चित्र: ऑपरेशन के बाद अकाल तख़्त)

विद्रोह

7 जून, सुबह 9 बजे, गंगानगर छावनी

सेना की नौवीं बटालियन आज रोज की तरह सीमा पर पैट्रोल नहीं कर रही थी। वह गुस्से में गंगानगर की सड़कों पर बंदूकें लेकर उतर आये थे। एक-दो नहीं, पूरे छह सौ सैनिकों ने विद्रोह कर दिया था। उनकी नाराज़गी थी कि आखिर अगर ऐसा कोई ऑपरेशन होना था, तो उन्हें बताया क्यों नहीं गया। स्वर्ण मंदिर के अंदर टैंक कैसे घुस गयी?

वह गंगानगर की सड़कों पर नारे लगाते जा रहे थे, "भिंडरावाले अमर रहे"

जब स्थानीय पुलिस ने उन्हें रोकना चाहा, उन पर गोलियाँ चला दी और एक पुलिस कॉन्स्टेबल की मृत्यु हो गयी।

उसके बाद इन्होंने दो टुकड़ियाँ बनाने का फैसला किया। आधे लोग दिल्ली की ओर निकले, और आधे पाकिस्तान की ओर। उनकी योजना था कि सीमा पार कर छापामार युद्ध लड़ेंगे।

आखिर राजपूताना राइफल की बटालियन ने आकर इन विद्रोहियों को काबू में किया, लेकिन फिर भी कुछ लोग सीमा पार कर पाकिस्तान पहुँच गये।

पाकिस्तान ने इन फौजियों और तमाम भागे हुए सिखों का स्वागत किया, और उन्हें खालिस्तानी उग्रवादियों के कैम्प में भेजा गया। दूसरी ओर, उन्होंने यह भी दावा कर दिया कि भिंडरावाले उनके पास हैं और जिंदा हैं। वह बीस जून को भिंडरावाले को टी. वी. पर दिखायेंगे। ऐसी अफवाहें बाद में भी चलती रही, लेकिन भिंडरावाले कभी लौट कर नहीं आये।

इससे भी बड़ा विद्रोह अगले दिन छिड़ा बिहार के रामगढ़ में स्थित सिख रेजिमेंट में। वहाँ एक धर्मनिष्ठ सिपाही ज्ञानी गुरनाम सिंह थे। वह पहले भी सिख फौजियों को धर्म का ज्ञान देते रहे थे। जब उन्हें इस ऑपरेशन ब्लूस्टार की जानकारी मिली, उन्होंने गुरुद्वारे में सिखों को इकट्ठा किया। इतवार का दिन था तो यूँ भी गुरुद्वारे में भीड़ थी। दस बजे सुबह सिख सिपाहियों ने रेजिमेंट के हथियारखाने पर हमला बोल दिया, और तमाम हथियार छीन लिये।

ब्रिगेडियर पुरी को जब खबर मिली कि उनके रेजिमेंट में विद्रोह हो गया, वह भागे आये। लेकिन, उन पर ताबड़तोड़ गोलियाँ बरसा दी गयी। घायल पुरी को अस्पताल ले जाया गया, लेकिन उन्होंने दम तोड़ दिया। अब ब्रिगेडियर ही मारे गये, तो अफरा-तफरी मचनी ही थी।

गुरनाम सिंह के साथ 1461 सैनिक थे! इतनी बड़ी सेना लेकर वह रामगढ़ से अमृतसर की ओर निकले। उन्होंने तमाम फौजी गाड़ियाँ और कई सिविलियन गाड़ियाँ उठा ली थी। बनारस पहुँचने से पहले ये दो टुकड़ियों में बँट गये। एक टुकड़ी को शक्तेशगढ़ रेलवे स्टेशन के पास घेरा गया। वहाँ भीषण गोलीबारी हुई। दूसरी टुकड़ी को भी सेना की बीसवीं इंफ़ेन्ट्री ब्रिगेड ने रोका। आपसी फ़ायरिंग में कुल 35 फौजी मारे गये।

इसी तरह जम्मू, पूना और उत्तर-पूर्व भारत में भी सिख सैनिकों ने विद्रोह किया। सिर्फ पंजाब ही नहीं, देश जल रहा था। अफ़वाहों का बाज़ार इस आग में घी डाल रहा था। कहा गया कि स्वर्ण मंदिर के अंदर भारतीय सेना के जवान बैठ कर सिगरेट-शराब पी रहे हैं। वहाँ के सरोवर में गंदगी फैला रहे हैं। इस बात में कुछ सच्चाई भी रही होगी। सेना के लिये तो यह यूँ भी अब एक युद्ध-स्थल या उग्रवादी कैंप था। एक सरकारी नोटिफिकेशन के अनुसार ऑपरेशन ब्लूस्टार को सात लाख क्वार्टर रम, तीस हज़ार क्वार्टर व्हीस्की, साठ हज़ार क्वार्टर ब्रांडी और एक लाख साठ हज़ार बीयर बोतल सैंक्शन किये गये थे!

कई दिनों तक सेना स्वर्ण मंदिर में जमी रही। इंदिरा गांधी ने कहा था कि अकाल तख्त का पुनर्निर्माण सरकार ही करायेगी। उसी का काम चल रहा था। जबकि सिख इसके सख्त खिलाफ़ थे। उन्होंने यूँ भी बाद में सरकारी ढाँचा तोड़ कर पुनर्निर्माण ही किया।

ऑपरेशन ब्लूस्टार ने सिखों को ऐसा दर्द दिया, जिसकी आग पंजाब के हर गाँव और कस्बे में कई वर्षों तक चलती रही। युवाओं के हाथ बंदूकें आ गयी। पाकिस्तान से स्मगल होकर हथियार आने लगे। उनके मन में बदले की आग दहकने लगी। उसी कड़ी में प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की हत्या उनके सिख अंगरक्षकों ने ही कर दी।

इंदिरा गांधी के हत्यारे सतवंत सिंह को जब कोर्ट लाया गया, तो वहाँ मूत्रालय में एम्स के डॉक्टर

डोगरा उसके सामने आये। डॉक्टर डोगरा ने इंदिरा गांधी ने पोस्ट-मॉर्टम किया था।

सतवंत सिंह ने पूछा, "डॉक्टर साहब! आपको मेरी वजह से तकलीफ़ हुई, माफी चाहता हूँ। लेकिन यह तो बता दो कि इंदिरा गांधी के शरीर में कितनी गोलियाँ गयीं।"

डॉक्टर डोगरा ने कहा, "इकत्तीस!"

सतवंत ने कोर्ट में कहा, "मेरी शहीदी के बाद मेरे शरीर का हर हिस्सा दान देना, बस आँखें देने से पहले मेरे माँ-बाप से पूछ लेना। मुझे हिन्दू, मुसलमान या ईसाई, किसी से नफरत नहीं। मेरी शहीदी के बाद कोई भी सिख किसी हिन्दू को पत्थर न मारे। फिर हम में और राजीव गांधी में फर्क ही क्या रह जायेगा? मैं वाहेगुरु से अरदास करता हूँ कि मुझे अगली ज़िंदगी भी एक वीर की दे। इंदिरा गांधी जैसे दुष्ट को मारने के लिये मैं एक तो क्या, सौ जन्म लेने को तैयार हूँ और हर बार हँसते-हँसते शहीद होने को तैयार हूँ।"

30 सितंबर, 2012, लंदन

लंदन और कनाडा। ये सिखों की भी जमीन है। वर्षों से सिख यहाँ बसे हैं, उनके मुहल्ले बसे हैं, गुरुद्वारे बने हैं, काम-धंधे चल रहे हैं। कई ग़ैरक़ानूनी तरीके से आये, तो कई कानूनी। कइयों ने खालसा भेष बना रखा है, तो कुछ ने पगड़ी डाल रखी है, और कइयों ने केश छँटवा लिये। ये पंजाब से मीलों दूर हैं, लेकिन इनके दिल में आज भी पंजाब बसा है। रहन-सहन में, गीत-संगीत मे, खान-पान में। कुछ सिखों के मन में एक काल्पनिक देश बसा है— खालिस्तान!

उस दिन एक वृद्ध भारतीय दंपति अपने होटल से लंदन की सैर पर निकले। वह बस में बैठ कर नजारे देख रहे थे। उनके साथ ही हरजीत कौर नामक एक 39 वर्षीय महिला बैठी थी। जहाँ-जहाँ वे जाते, हरजीत साथ हो लेती। जाहिर है, वह इनका पीछा कर रही थी। वह मोबाइल पर मेसेज कर उनके लोकेशन भी किसी को भेज रही थी।

लंदन के क्वेबेक स्ट्रीट पर जब यह दंपति पहुँचे, और यूँ ही फुटपाथ पर चलने लगे कि तीन सिखों ने उन पर हमला कर दिया। चाकू से गला रेत दिया गया। यह लेफ़्टिनेंट जनरल कुलदीप सिंह बरार पर किये गये कई हमलों में से एक था। इस बार फिर ऑपरेशन ब्लूस्टार के नायक बच गये। ऐसी किस्मत जनरल अरुणकुमार वैद्य की नहीं थी। 1984 में ऑपरेशन के समय वह भारतीय सेना के आर्मी चीफ़ थे। 1986 में रिटायर होकर उन्होंने कमान ब्लूस्टार के दूसरे नायक सुंदर जी को दी थी। जब वह पुणे में अपने नये-नवेले बंगले से अपनी सफेद मारुति कार से निकले, उनको गोली मार दी गयी।

अब इस ऑपरेशन को कई वर्ष हो गये। पंजाब से उग्रवाद जाता रहा, और यह एक खुशहाल राज्य बन गया। पंजाब के बिना भारत की कल्पना ही असंभव है। इसकी ऊर्जा, जिजीविषा, संस्कृति, उत्साह, संगीत सब कुछ भारतीयता को पहचान देती है। यह अधिकतर भारतीय मानेंगे कि ऑपरेशन ब्लूस्टार एक मुश्किल निर्णय था, जो एक ख़ास परिस्थिति से जन्मा था। ऐसा कोई भी

ऑपरेशन हमें भविष्य में न करना पड़े, यही सब चाहेंगे।

इस पंक्ति के लिखे जाते वक्त, 7 जून, 2020 को अकाल तख्त के जत्थेदार ज्ञानी हरप्रीत सिंह ने कहा कि हर सिख आज भी खालिस्तान चाहता है। अगर भारत की सरकार हमें देती है, तो हम खुशी-खुशी लेंगे। आगे उन्होंने कहा कि 36 वर्षों से हमारा शोषण हो रहा है।

यह भी सच है कि भिंडरावाले आज भी कई सिखों के लिये पूज्य शहीद हैं। भिंडरावाले शायद उस जगह नहीं पहुँचते, अगर राजनीति न होती। अगर संजय गांधी ने उनको अकाली दल के मुक़ाबले खड़ा नहीं किया होता। अगर ज्ञानी जैल सिंह ने दरबारा सिंह से अपनी रंजिश के चलते भिंडरावाले का साथ नहीं दिया होता। अगर पहली गिरफ्तारी के बाद इंदिरा गांधी और जैल सिंह ने उन्हें छोड़ा नहीं होता। अगर अकाली दल अपने राजनैतिक फायदे के लिये उनके साथ न होती। अगर स्वर्ण मंदिर में उनके हथियारों को नहीं पहुँचाया जाता। अगर ऑपरेशन सनडाउन होने दिया गया होता। अगर पाकिस्तान अपना अलगाववादी खेल न खेलती। अगर सियासत न होती।

लेकिन, सियासत तो अभी और होनी थी। सिर्फ पंजाब ही नहीं, असम को भी जलना था। इंदिरा गांधी की मृत्यु के बाद राजीव गांधी का राज्याभिषेक हुआ। उसके साथ ही एक घिनौना खेल शुरु हुआ, जिसने सिखों के ताजे जख्म पर फिर से नमक छिड़क दिया।

प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने बड़ी बेतकल्लुफ़ी से कहा, “जब बड़ा पेड़ गिरता है, तो धरती थोड़ी हिलती है”

(जारी है लोटस सिरीज़)

संदर्भ

सिख इतिहास. ठाकुर देशराज. ग्रामोत्थान विद्यापीठ. गंगानगर

Amritsar: Mrs. Gandhi's last battle by Mark Tully and Satish Jacob; Rupa publications. 2006

India: The Seige within by M J Akbar; Penguin books. 1985

History of the Sikhs: From the Origin of the Nation to the Battles of the Sutlej by J. D. Cunningham; John Murray London. 1849

The Akali Movement by Mohinder Singh; National Institute of Punjab Studies. 1997 (First published by Macmillan in 1978)

Bhindrawale: Myth and reality by Chand Joshi; Vikas publishing. 1984

The Punjab Story by Amarjit Kaur, Arun Shourie, Khushwant Singh, Subhash Kirpekar, Sunil Sethi, Lt. General J S Aurora and Tavleen Singh; Roli Books International. 1984

Gallant defender by A. R. Darshi; B Chattar Singh Jiwan Singh (Publisher). 1999

Tragedy of Punjab: Operation Blue Star and After by Kuldip Naiyar and Khushwant Singh; Vision Books. 1984

India After Gandhi: The History Of World's largest democracy by Ramachandra Guha; First published by Macmillan. 2007

India today Archives

Hindustan Times Archives

The Hindu Archives

BBC Archives

Pradhanmantri documentary by ABP News. 2013 (via Youtube).

Bonzuri Bytes – History for the People in Hurry

‘बोंज़ूरी बाइट्स’ लघु पुस्तकों की वह शृंखला है जो कम समय में और संक्षिप्त (परंतु सतही नहीं) तौर पर अमुक विषय पर बहुत सारी जानकारीयाँ उपलब्ध करा देती है।

सरल, स्पष्ट, रोचक और संक्षिप्त – यही इसका मुख्य आकर्षण है।

शृंखला की अन्य पुस्तकें:

Bonzuri Project on Amazon